ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 16 दिसम्बर 2018

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 16 दिसम्बर 2018 से 22 दिसम्बर 2018

मार्गशीर्ष शु. – 09 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 60, अंक 50, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

महात्मा हंसराज पब्लिक स्कूल पंचकूला में रजत जयन्ती समारोह

महात्मा हंसराज पब्लिक स्कूल, पंचकूला का रजत जयंती समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ, जिसमें विद्यालय के सभी छात्र तथा मेहमान सम्मिलित हुए। कार्यक्रम का शुभारम्भ गणेश वंदना द्वारा पारंपरिक ढंग से किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन डी.ए.वी. संस्थाओं के प्रधान पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी जी ने दीप प्रज्ज्वल्लित करके किया।

इस अवसर पर रंगारंग कार्यक्रम के माध्यम से भारत की सांस्कृतिक एकता तथा विविधता का सुन्दर निर्देशन किया गया। इसके बाद एक पी.पी.टी. के माध्यम से दर्शकों के समक्ष विद्यालय की 25वीं साल की प्रगति साल दर साल प्रदर्शित की गई। विद्यालय के पुराने छात्रों तथा स्टॉफ के सदस्यों को उनके योगदान के लिए विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

मुख्यातिथि डॉ. पूनम सूरी जी के करकमलों द्वारा विद्यालय की वार्षिक पत्रिका 'अभिव्यक्ति' का भी अनावरण किया गया। मुख्यातिथि डॉ. पूनम सूरी ने प्रधानाचार्या के नेतृत्व तथा अनथक प्रयासों की भूरि–भूरि सराहना की, जिनके कारण विद्यालय प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर का 46वाँ वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी मॉडल स्कूल अबोहर का वार्षिक पुरस्कार वितरण उत्सव 'पैरागॉन' स्कूल प्रांगण में आयोजित किया गया। इस अवसर पर डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी नई दिल्ली के अध्यक्ष श्री पूनम सूरी जी के मुख्य सलाहकार व प्रसिद्ध शिक्षाविद प्रिंसीपल श्री एच.आर. गंधार मुख्य अतिथि थे। प्रिंसीपल श्रीमती सुदेश गंधार इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि थी। विद्यालय के शैक्षणिक सत्र 2017– 18 के मेधावी, प्रतिभाशाली व उपलब्धियों को अर्जित करने वाले विद्यार्थियों को मुख्य अतिथि द्वारा सम्मानित किया गया।

समारोह का आगाज मुख्यातिथि द्वारा स्कूल ध्वज फहरा कर, सरस्वती वंदना के माध्यम से वेद मंत्रों का गायन और डी.ए.वी. गान के साथ साथ गणमान्य व्यक्तियों द्वारा ज्ञान का दीपक प्रज्ज्वलित कर किया गया।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर द्वारा 'वृक्षारोपण' का आयोजन

उत्तर भारत की अग्रणी शिक्षण संस्था बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर में राष्ट्रीय सेवा योजना, इकाई द्वारा ***'स्वच्छता पखवाड़ा'*** कार्यक्रम के अन्तर्गत वातावरण सरंक्षण एवं सम्वर्द्धन हेतु वृक्षारोपण किया गया। इस भव्य अवसर को माननीय अतिथि श्री लखबीर सिंह, ए.डी.सी.पी. अमृतसर –II एवं श्रीमती हरकिरणदीप कौर, कार्यक्रम अधिकारी, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर ने अपनी गरिमामयी उपस्थिति से गौरवान्वित किया। इस मौके पर कॉलेज के कॉमर्स ब्लाक के लॉन में सुखचैन, सागवान, बहेड़ा आदि पौधे आरोपित किये गये। मिशन आगाज़ के कार्यकारी निर्देशक श्री दीपक बब्बर ने भी नन्हें पौधे उपहारस्वरुप प्रदान किये। इस स्वर्णिम अवसर पर माननीय श्री लखबीर सिंह जी एवं श्रीमती हरकिरणदीप कौर ने रैली को झंडी दिखाकर रवाना किया।

आदरणीय प्राचार्या डॉ. पुष्पिन्दर वालिया ने एन.एस.एस. कार्यक्रम अधिकारी श्रीमती सुरभि सेठी और प्रिया शर्मा एवं उनकी टीम तथा एन.एस.एस. वॉलंटियर्स की इस सार्थक पहल हेतु हार्दिक बधाई प्रदान की। आपने इसे भारत को प्रदूषण से मुक्त रखने एवं स्वच्छता बनाये रखने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बताया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 16 दिसम्बर 2018 से 22 दिसम्बर 2018

त्रिविध पवित्रता

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पऋतस्य गोपा न दभाय सुक्रतुः, त्रीष पवित्रा हृद्यन्तरा दधे।
विद्वान्त्स विश्वा भुवनाभि पश्यति, अवाजुष्टान् विध्यति कर्ते अव्रतान्।।

ऋग् ९.७३.८

ऋषिः **पवित्रः आङ्गिरसः** । देवता **पवमानः सोमः** । छन्दः **जगती** ।

● **(ऋतस्य)** सत्य का, **(गोपाः)** रक्षक, **(सुक्रतुः)** शुभ प्रज्ञानों और शुभ कर्मों वाला (सोम प्रभु), **(दभाय न)** हिंसा या उपेक्षा किये जाने योग्य नहीं है।, **(सः)** वह, **(हृदि अन्तः)** हृदय के अंदर, **(त्री पवित्रा)** तीन पवित्रों को–विचार, वचन और कर्म की पवित्रताओं को, **(आ दधे)** स्थापित करता है।, **(विद्वान्)** विद्वान्, **(सः)** वह, **(विश्वा)** समस्त, **(भुवना)** भूतों को, **(अभि पश्यति)** देखता है, **(अजुष्टान्)** अप्रिय, **(अव्रतान्)** व्रत–हीनों को, **(कर्ते)** अंध कूप में, **(विध्यति)** धकेलता है।

● 'सोम' रमात्मा 'ऋत' का संरक्षक और अनृत का घर्षक है। जहाँ भी वह सत्य को पाता है, उसे प्रश्रय देता है। वह 'सुक्रतु' है, शुभ प्रज्ञानों, शुभ विचारों, शुभ संकल्पों और शुभ कर्मों से युक्त है और अपने सम्पर्क में आनेवाले मानवों को भी वैसा ही बनाना चाहता है। परन्तु मानव को सत्य पथ का पथिक तथा 'सुक्रतु' वह तभी बना सकता है, जब मानव उसकी शरण में जाए, उसे आत्म–समर्पण करे, उसे अपने हृदय–मन्दिर में उपास्य देव के रूप में प्रतिष्ठित करे। यदि मानव जीवन में उसकी हिंसा या उपेक्षा ही करता रहेगा, तो उससे मिलनेवाली 'सत्य' और 'शुभक्रतु' की प्रेरणा से वह वंचित ही रहेगा। अतः 'पावनकर्ता' सोमप्रभु किसी से कभी भी उपेक्षणीय नहीं है।

'सोम' प्रभु जब अपने उपासक को पवित्र करना चाहता है, तब उसके हृदय में तीन 'पवित्रों' को स्थापित कर देता है। वे तीन हैं विचार की पवित्रता, वाणी की पवित्रता और कर्म की पवित्रता। मनुष्य के विचार ही वाणी और कर्म के रूप में प्रतिफलित हुआ करते हैं, अतः वाणी और कर्मों को पवित्र बनाने के लिए सर्वप्रथम विचारों की पवित्रता आवश्यक है। यदि किसी मनुष्य के विचार अपवित्र हैं, मन में वह पाप–चिंतना करता रहता है, तो वाणी या कर्म से पाप न भी करे, तो भी वेद–शास्त्र उसे पापी कहते हैं। अतः प्रभु प्रथम अपने कृपापात्र मनुष्य से मन को पवित्र करता है, फिर उस पवित्रता को क्रमशः वाणी और कर्म में भी प्रतिमूर्त कर देता है। 'सोम प्रभु' विद्वान् है, वह प्रत्येक प्राणी की गतिविधि को सूक्ष्मता के साथ देखता है। उसकी आँख से कुछ भी नहीं छिपता। अपनी विवेक–चक्षु से साधु और असाधु की पहचान कर लेता है। साधुओं को सत्कर्म में प्रोत्साहित करता है। जो व्रतहीन हैं, किसी भी शुभ–कर्म के संकल्प से रहित हैं, अतएव जो दुर्वृत्त, अप्रिय और असेव्य हैं, उन्हें दुर्गति के अन्धकूप में धकेलता है, दण्डित करता है। आओ, हम 'पवमान सोम' को अपने जीवन की पतवार सौंपकर मन, वचन और कर्म से पवित्र बनें।

❑

वेद मंजरी स

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भगवान शंकर और दयानन्द

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में स्वामीजी ने बताया पाँच सहस्त्र वर्ष पूर्व यदि संसार दुःख से पागल था तो आज उससे अधिक दुःखी और अधिक पागल है। भौतिक उन्नति हुई है अवश्य, विज्ञान आगे बढ़ा है, औद्योगिक और कृषि–उत्पत्ति बढ़ी है, परन्तु सुख किसी को नहीं। इसकी गम्भीरता में जाने पर पता लगेगा कि आत्मा को खोजे बिना, आत्मा को पाये बिना सच्चा आनन्द कभी नहीं मिलता।

आत्मा की शक्ति के सामने और कोई शक्ति नहीं चलती। आत्मा की शक्ति जिसके अन्दर जाग उठती है, उसके समक्ष ऐटम बमों और हाइड्रोजन बमों की शक्ति भी हार जाती है। आत्मा की खोज के बिना सच्ची शक्ति कभी नहीं मिलती, इसके बिना सच्चा सुख कभी नहीं मिलता।

वेद का अर्थ है ऋग्, यजु, साम, अथर्व और वेदान्त का अर्थ है वेद अर्थात् ज्ञान की सीमा, ज्ञान का अन्त।

अब आगे ...

श्री शंकर ने वेदान्त का आधार प्रस्थानत्रयी को माना है – तीन प्रकार के ग्रन्थों को। इनमें पहले प्रकार के ग्रन्थ हैं उपनिषद्, फिर गीता, तब ब्रह्मसूत्र। जिस प्रकार आर्यसमाज वेद को सबसे ऊँचा मानता है, उसी प्रकार वेदान्ती उपनिषदों को सबसे ऊँचा मानते हैं। परन्तु उपनिषद् वेद के विरुद्ध तो नहीं हैं! वे या तो वेद का भाग है अथवा उसके आध्यात्मिक ज्ञान की व्याख्या। वेद में प्रत्येक प्रकार का ज्ञान है और सभी विद्याएँ; उपनिषदों में केवल आध्यात्मिक ज्ञान है– केवल ब्रह्मविद्या।

इस ब्रह्मविद्या का महत्त्व क्या है, यह इस बात से समझिये कि केवल भारतवर्ष के ऋषियों–महात्माओं का ही नहीं, दूसरे देशों और दूसरे धर्मों के लोगों को भी इसने मोहित किया है।

आज से तीन वर्ष पूर्व औरङ्गज़ेब के भाई दाराशिकोह ने जब उपनिषदों का कुछ भाग सुना तो ऐसा मोहित हुआ कि छः मास तक प्रतिदिन उपनिषदों की कथा सुनता रहा। उपनिषदों पर उसे ऐसी श्रद्धा हुई कि काशी से ब्राह्मणों को बुलाकर उसने उनका फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया। केवल दाराशिकोह को ही नहीं, उसकी बहिन ज़ेबन्निसा को भी उननिषदों में श्रद्धा हुई। उसने फ़ारसी के उपनिषद् पढ़े। उनके ज्ञान से उसके मन में जो शान्ति जाग उठी और जो जागृति उत्पन्न हुई, उसके सम्बन्ध में एक कथा प्रसिद्ध है। उस समय आजकल की भाँति शीशे नहीं होते थे। आजकल तो स्त्रियों के अतिरिक्त कॉलिजों के नवयुवक भी जेब में कंघी और शीशा लिये फिरते हैं। उस समय शीशे केवल धनियों और राजाओं के पास होते थे। औरङ्गज़ेब के पास भी चीन का व्यापारी एक शीशा लाया। उसने वह शीशा ज़ेबन्निसा को दे दिया। ज़ेबुन्निसा को शीशा बहुत प्रिय लगा। उसने अपने कमरे में सँभालकर रख दिया। एक दिन वह स्नान के पश्चात् धूप में बैठी थी। शीशा देखने का विचार आया तो लौंडी से बोली, "अन्दर जाकर चीन का शीशा ले आओ!" लौंडी गई, शीशे को उठाकर ला रही थी कि अपना मुख उसमें देखने लगी। ध्यान था शीशे की ओर। ठोकर लगी, गिर गई, शीशा टूट गया और डर के मारे थर–थर काँपने लगी। इतनी अमूल्य वस्तु उसने असावधानी से तोड़ दी, क्या जाने अब ज़ेबुन्निसा क्या दण्ड देगी! इसी भय से उसका हृदय काँप उठा। जहाँ खड़ी थी वहीं खड़ी रही। भय मानो उसे व्याकुल किये देता था। ज़ेबुन्निसा ने एक और लौंडी को भेजा कि जाकर देखो कि जिस लौंडी को शीशा लेने को भेजा था वह अब तक आई क्यों नहीं।

लौंडी ने वापस आकर डरते हुए कहा, "राजकुमारी! वह शीशा तो टूट गया।"

राजकुमारी को उपनिषद् का ज्ञान आ गया। वह हँसते हुए बोली–

अज ख़ता आईनाये चीनी शकस्त।
खूब शुद सामाने खुदबीनी शकस्त।।'

1. भूल से चीनी शीश टूट गया तो अच्छा हुआ, विलासिता का सामान समाप्त हो गया। – अनुवादक

यह प्रभाव! यह शान्ति देने वाला प्रभाव हुआ ज़ेबुन्निसा पर! और आज से 150 वर्ष पूर्व इस फ़ारसी अनुवाद से एक फ्रेंच विद्वान ने उपनिषदों का लैटिन भाषा में अनुवाद किया। लैटिन से उसका अनुवाद जर्मनी में हुआ, तब यूरोप की अन्य भाषाओं में। शॉपनहार ने जब उन्हें पढ़ा तो पुकारकर कहा, "मुझे न केवल जीने का आश्रय मिल गया है, अपितु मरने का आश्रय भी मिल गया है।"

यह है उपनिषदों और उसके ब्रह्मज्ञान का महत्त्व!

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

पण्डित श्रीगंगाप्रसाद उपाध्याय

(व्यक्तित्व और कृतित्व)

● **स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती**

गतांक से आगे

उपाध्यायजी के दार्शनिक ग्रन्थ सन् 1926 में उपाध्यायजी का अति प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आस्तिकवाद' प्रकाशित हुआ। उस समय उनका स्थापित घर का प्रेस 'कला प्रेस, प्रयाग' (संचालक श्री विश्वप्रकाश) न था। इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण लीडर प्रेस में छपा और इस ग्रन्थ पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपना मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार जो 1200 रुपये का था उपाध्यायजी को कलकत्ता के अधिवेशन में ज्येष्ठ शुक्ल 12 संवत् 1988 विक्रमी (1931 ई.) को दिया। आपका दूसरा दार्शनिक ग्रन्थ 'अद्वैतवाद' था जिसके प्रथम कतिपय पृष्ठ 'माधुरी' पत्रिका में प्रकाशित हुये। किन्तु शंकर–विरोधी होने के कारण इसका प्रकाशन पत्रिका में रोक दिया गया। यह पुस्तक 1927 में कला प्रेस, प्रयाग में छपी। 1930 में **'शंकर, रामानुज और दयानन्द'** के नाम से 48 पृष्ठों की एक पुस्तिका प्रकाशित हुयी, जिसमें तीनों आचार्यों के दार्शनिक विचारों का तुलनात्मक विवेचन है। 1933 में **'जीवात्मा'** पुस्तक निकली और 1947 में **शांकर भाष्यालोचन** प्रकाशित हुआ जिसमें शंकर के अद्वैतवाद की अपूर्व आलोचना है। ऐसी आलोचना अब तक किसी अंग्रेज़ी या संस्कृत ग्रन्थ में भी प्राप्त नहीं है। 1955 में उपाध्यायजी का प्रसिद्ध ग्रन्थ **फिलासफी आफ दयानन्द** प्रकाशित हुआ। इसका दूसरा संस्करण 1968 में भी निकला। आजकल आर्यजगत् में **दयानन्द दर्शन** पर कई ग्रन्थ हैं। यह हर्ष की बात है कि उपाध्यायजी ने बड़े परिश्रम से **पूर्व मीमांसा दर्शन** के शाबर भाष्य का हिन्दी अनुवाद किया था। पर भीमकाय होने के कारण उस अनुवाद का आज तक प्रकाशन नहीं हो पाया। प्रकाशन की कठिनाई का अनुभव करते हुये उपाध्यायजी ने इसी विषय का एक छोटा ग्रन्थ **'मीमांसा–प्रदीप'** लिखा, जो 1961 में प्रकाशित हुआ। छोटे दार्शनिक ग्रन्थों में **'कर्मफल सिद्धान्त'** का भी उल्लेख किया जा सकता है जिसका प्रथम संस्करण 1960 में प्रकाशित हुआ।

उपाध्यायजी के ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुवाद

अपनी वृद्धावस्था में उपाध्यायजी ने ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण और यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण का अनुवाद किया। आरम्भ में महामहोपाध्याय डॉ. गंगानाथ झा की संस्तुति पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इन दोनों को प्रकाशित करने का निश्चय किया था किन्तु बड़ी कठिनाई से हिन्दी साहित्य सम्मेलन 1950 में ऐतरेय ब्राह्मण का अनुवाद ही छाप सका। इस अनुवाद में संस्कृत का मूल पाठ नहीं है। बहुत दिनों बाद शतपथ ब्राह्मण छापने का कार्य स्वर्गीय पं. रामस्वरूप शर्मा ने अपनी नई संस्था 'The Research Institute of Ancient Scientific Studies' पटेल नगर, नई दिल्ली, के माध्यम से हाथ में लिया। [इस संस्थान की ओर से प्रो. सत्यप्रकाश (स्वामी सत्यप्रकाश) के ग्रन्थ प्रकाशित होते थे। शतपथ ब्राह्मण को प्रकाशित करने का कार्य डॉ. सत्यप्रकाश जी की दिवंगता पत्नी डॉ. रत्नाकुमारी की स्मृति में प्रारम्भ किया गया था और शतपथ ब्राह्मण की यह टीका **रत्नदीपिका** नाम से प्रकाशित हुई। इसमें मूल शतपथ ब्राह्मण और उपाध्यायजी की टीका और उसके साथ–साथ डॉ. सत्यप्रकाश की अंग्रेजी में विस्तृत भूमिका भी है। यह रत्नदीपिका टीका उपाध्यायजी के जीवनकाल में पूरी न छप सकी। इसका प्रथम भाग 1967 में, द्वितीय भाग 1969 में और तृतीय भाग 1970 में प्रकाशित हुआ। तीनों भागों में डॉ. सत्यप्रकाश की अंग्रेजी भूमिका 727 पृष्ठ की है और मूल ग्रन्थ और अनुवाद के 1187 पृष्ठ हैं।]

यहाँ यह कह देना अनुचित न होगा कि अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण का अनुवाद प्रयाग से ही स्वर्गीय पं. क्षेमकरणदासजी त्रिवेदी के द्वारा प्रकाशित हुआ था। इस प्रकार प्रयाग को ऐतरेय, शतपथ और गोपथ इन तीनों ब्राह्मणों के हिन्दी अनुवाद का श्रेय प्राप्त है। उपाध्यायजी ने **मनुस्मृति** के क्षेपक श्लोकों को निकाल कर शेष संस्करण (अर्थात् परिष्कार) और हिन्दी अनुवाद 1936 में प्रकाशित किया था और ईश उपनिषद् की भी एक व्याख्या 1940 में प्रकाशित की।

रेलिजस–रेनिसाँ सीरीज

एक समय था जब हिन्दुस्तान के बाज़ार में अंग्रेज़ी के पेलिकन सीरीज की भरमार थी। आठ–आठ आने मूल्य की अति गम्भीर एवं लोकप्रिय विषयों का यह ठोस साहित्य था। इसी विचार से उपाध्यायजी ने आर्यसमाज के अंग्रेज़ी साहित्य की एक शृंखला प्रारम्भ की जो रूढ़ियों की उच्छेदक और नये विचारधारा की प्रवर्तक हो। यह शृंखला आर्यसमाज चौक के ट्रैक्ट विभाग के माध्यम से प्रकाशित हुई। इसकी प्रत्येक पुस्तक में डेढ़ सौ से दो सौ पृष्ठ रखे गये थे। यह माला 1939 से प्रारम्भ हुई और दो तीन वर्ष चली। इसका मुद्रण प्रयाग के सर्वश्रेष्ठ मुद्रक लॉ जर्नल प्रेस को सौंपा गया। इस शृंखला के अन्तर्गत उपाध्यायजी की निम्न पुस्तकें प्रकाशित हुईं–

1. Reason And Religion, 1938.
2. Swami Dayanands's Contribution to Hindu Solidarity, 1940.
3. I and My God, 1939.
4. Origin Mission and Scope of Arya Samaj, 1940.
5. Worship, 1940.
6. Christianty in India, 1941.
7. Superstition, 1941.

इसी प्रकार की दो और पुस्तकें उपाध्यायजी ने लिखी जो उपर्युक्त शृंखला के अन्तर्गत न थीं। Vedic Culture सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित हुई, Marriage and Married Life आर्यसमाज चौक, प्रयाग द्वारा।

सत्यार्थप्रकाश के अनुवादों का कार्य

उपाध्यायजी ने स्वयं 1964 में सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेज़ी अनुवाद किया। उनके अनुवाद से पूर्व दो अन्य अनुवाद आर्य जनता में प्रचलित थे। एक तो मास्टर दुर्गाप्रसादजी का और दूसरा डॉ. चिरंजीव भारद्वाज का। यह दोनों अनुवाद अब भी उपलब्ध हैं। पर उपाध्यायजी के अनुवाद की अपनी विशेषतायें हैं जो अनुवाद को देखने पर स्वयं स्पष्ट हो जायेंगी। इस अनुवाद के दो संस्करण पहले छप चुके हैं और तीसरा संस्करण उपाध्याय जन्म शती के अवसर पर डॉ. रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान द्वारा प्रकाशित हो रहा है। उपाध्यायजी के प्रयत्न और प्रेरणा से सत्यार्थ प्रकाश बर्मी भाषा और चीनी भाषा में भी प्रकाशित किया गया। सारनाथ के प्रसिद्ध भिक्षु कित्तिमाजी ने इसका बर्मी भाषा में अनुवाद किया और प्रयाग विश्वविद्यालय के चीनी भाषा के प्राध्यापक डॉ. चाऊ स्यांग ह्वांग (Dr. Chow Hsiang Huang) ने चीनी सत्यार्थ प्रकाश। द्वितीय विश्वयुद्ध के अनन्तर विपरीत परिस्थितियों में हाँगकाँग में चीनी अनुवाद 1958 में छपाया जा सका, और कलकत्ते में इसकी कुछ ही प्रतियाँ प्राप्त हो सकीं। **खेद की बात है कि इस सत्यार्थ प्रकाश के पुनः मुद्रण की और उसके प्रचार के सम्बन्ध में आर्यसमाज ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। चीनी भाषा बोलने वाले न केवल चीन में हैं बल्कि मोरिशस आदि द्वीपों में और अफ्रीका के कई भागों में भी हैं और आज तो चीन एक प्रबल राष्ट्र है। उपाध्यायजी के इस प्रयास के बाद आज तक आर्यसमाज ने अभी तक सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद किसी अन्य विदेशी भाषा में नहीं कराया है। यह असन्तोष की बात है।**

क्रमशः

प्रस्तुति डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
अमेठी, उ.प्र.

इन्द्रधनुषी रूप

रूप रंग का जादू तेरा, कुछ ऐसा असर कर जाए।
भर नजर जिसे भी देख ले तू, वह आश्चर्य से भर जाए।।
दरो–दीदार ही मुश्किल है, रास्ते सब पहचानें हैं।
तेरे इन्द्रधनुषी रूप के, हज़ारों हज़ार अफसानें है।।
जब भी तू लाज से शरमाए, गीत ग़ज़ल मुक्तक बन जाए।
तारे भी तुझ पर टूट पड़े, बादल भी तुझ पर झुक आए।।
मोर पपैया कोयल मैना, गुनगुनाते तेरे गानें हैं।
तेरे इन्द्रधनुषी रूप के, हज़ारों हज़ार अफसानें हैं।।
राह दिखाने बिजली चमके, दाह मिटाने सावन बरसे।
पशु पक्षी जल जीव ग्रह नक्षत्र, फकत तेरी सूरत तरसे।।
गाँव गली नगर और जनपद, अनगिनत तेरे ठिकानें हैं।
तेरे इन्द्रधनुषी रूप के, हज़ारों हज़ार अफसानें है।।
सोये तो सपने सताये, जागे तो भंवरे मिल जाए।
रूठे तो रूप ग्रहण लगे, हंस दे तो मधुबन खिल जाए।।
प्यार की फेहरिश्त बड़ी है, कदम कदम पर परवानें हैं।
तेरे इन्द्रधनुषी रूप के, हजारों हजार अफसानें है।।
फूल सी तू फूलों से सजी, जब हंसती गाली इठलाती।
धूप तेरा रूप चुराती, पवन सिर आंचल को उड़ाती।।
तेरी सुन्दरता में डूबे, जाने कितने मयखानें हैं।
तेरे इन्द्रधनुषी रूप के, हज़ारों हज़ार अफसानें है।।

दिलचस्प
चूरू–331001
राजस्थान

सत्यार्थ प्रकाश के 13वें समुल्लास में से चुने हुए अनमोल वचन

● भावेश मेरजा

सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जग प्रसिद्ध ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ मूलत: हिन्दी में लिखा गया है। इस ग्रन्थ के पूर्वार्ध में 10 समुल्लास अर्थात् अध्याय हैं। पूर्वार्ध में वैदिक धर्म सम्बन्धित अनेक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। उत्तरार्ध में चार समुल्लास हैं। उत्तरार्ध के इन समुल्लासों में आर्यावर्त्तीय मत–सम्प्रदायों, चार्वाक–बौद्ध–जैन मतों, ईसाई तथा मुसलमानों के मत की क्रमशः उनके मान्य प्रमुख ग्रन्थों के आधार पर समालोचना की गई है। ग्रन्थ की मुख्य भूमिका, उत्तरार्ध के चारों समुल्लासों की अनुभूमिकाओं तथा ग्रन्थ के अन्त में लिखे गए स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश प्रकरण में महर्षि ने इस ग्रन्थ का प्रयोजन सत्यान्वेषण के द्वारा ऐक्य निर्माण कर मानव जाति की उन्नति करना है यह भली–भाँति दर्शाया है। इन मत–मज़हबों की समीक्षा प्रस्तुत करने से पूर्व ग्रन्थ के पूर्वार्ध के अन्त में महर्षि ने अपने पाठक वृन्द से यह आशा व्यक्त की है कि वे इस ग्रन्थ के उत्तरार्ध में की गई समालोचनाओं को न्याय दृष्टि से देखेंगे और इनमें किए गए स्थूल तथा सूक्ष्म खण्डनों के अभिप्राय को ठीक से समझेंगे। ग्रन्थ का 13वाँ समुल्लास ईसाइयों के मत के विषय में है जिसमें बाइबिल की अनेक आयतों को उद्धृत कर उन पर महर्षि ने अपनी 'समीक्षा' प्रकाशित की है। उत्तरार्ध के ये चारों समुल्लास मुख्यतः खण्डन–मण्डन परक होने से देखा गया है कि कई बार कुछ पाठक इन समुल्लासों में विद्यमान कई अति महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक बातों एवं सच्चाइयों की ओर सम्यक् ध्यान नहीं दे पाते हैं। प्रस्तुत लेख में 13वें समुल्लास से संकलित की गई ऐसी कुछ चुनी हुई सच्चाइयाँ तथा सिद्धान्त वाक्य पाठकों के स्वाध्याय तथा चिन्तन हेतु प्रस्तुत किए जाते हैं।

1. जो वेद मार्ग का स्वीकार करेगा उसके न्याय होने में कुछ भी देर न होगी।
2. आकाश साकार पदार्थ नहीं है जिसको कोई लपेटे व इकट्ठा कर सके।
3. क्या परमेश्वर का भी कोई मन्दिर हो सकता है? जो वेदोक्त परमात्मा सर्वव्यापक है उसका कोई भी मन्दिर नहीं हो सकता।
4. न्याय उसी को कहते हैं कि जिसने जैसा व जितना कर्म किया उसको वैसा और उतना ही फल देना। उससे अधिक या न्यून देना अन्याय है।
5. जो अन्यायकारी की उपासना करते हैं वे अन्यायकारी क्यों न हों।
6. संयोगजन्य पदार्थ को वियोग अवश्य होता है।
7. जब अकेला पापी स्वर्ग को प्राप्त नहीं हो सकता तो जो अनेक पापियों के पाप के भार से युक्त है वह क्यों स्वर्गवासी हो सकता है?
8. झूठ के संग से सत्य भी शुद्ध नहीं रहता।
9. वचन (शब्द) के द्वारा सृष्टि कभी नहीं हो सकती जब तक उसका (उपादान) कारण न हो।
10. वचन के बिना भी चुपचाप रह कर कर्त्ता सृष्टि कर सकता है।
11. ईश्वर किसी की सिफारिश नहीं सुनता।
12. ईश्वर का न कोई पुत्र, न वह किसी का बाप है; क्योंकि वह किसी का बाप हो तो किसी का श्वसुर, श्याला सम्बन्धी आदि भी हो।
13. कोई कितनी भी चतुराई करे परन्तु अन्त में सच–सच और झूठ–झूठ हो जाता है।
14. यह कितना बड़ा अन्याय है, जो नरक में जायेगा सो अनन्त काल तक नरक भोगे और जो स्वर्ग में जायेगा वह सदा स्वर्ग भोगेगा। यह भी बड़ा अन्याय है; क्योंकि अन्त वाले साधन और कर्मों का फल भी अन्त वाला होना चाहिये और तुल्य पाप व पुण्य दो जीवों का भी नहीं हो सकता। इसीलिये तारतम्य से अधिक न्यून सुख–दुःख वाले अनेक स्वर्ग और नरक हों तभी सुख–दुःख भोग सकते हैं।
15. अपने मुख से अपनी बढ़ाई करना अच्छे मनुष्यों का काम नहीं।
16. जो कोई अच्छा काम करे वह अच्छा और बुरा काम करे वह बुरा फल पाता है।
17. जितनी सामग्री धनाढ्यों के पास होती है उतनी दरिद्रों के पास नहीं। यदि धनाढ्य लोग विवेक से धर्म–मार्ग में व्यय करें तो दरिद्र नीच गति में पड़े रहें और धनाढ्य उत्तम गति को प्राप्त हो सकते हैं।
18. जो अविश्वासी, अपवित्रात्मा, अधर्मी मनुष्यों का लेख होता है उस पर विश्वास करना कल्याण की इच्छा करने वाले मनुष्य का काम नहीं।
19. सब कर्मों के फल यथायोग्य देने से ही न्याय और पूरी दया होती है।
20. जो पाप क्षमा करने की बात है वह केवल भोले लोगों को प्रलोभन देकर फंसाना है।
21. जैसे दूसरे के पिये मद्य, भाँग, अफीम खाये का नशा दूसरे को नहीं प्राप्त हो सकता वैसे ही किसी का किया हुआ पाप किसी के पास नहीं जाता किन्तु जो करता है वही भोगता है, यही ईश्वर का न्याय है।
22. यदि दूसरे का किया पाप–पुण्य दूसरे को प्राप्त हो अथवा न्यायाधीश स्वयं ले ले व कर्ताओं को ही यथायोग्य फल ईश्वर न दे तो वह अन्यायकारी हो जाये।
23. धर्म ही कल्याणकारक है।
24. भूतों का आना व निकालना, बिना औषधि व पथ्य के व्याधियों का छूटना सृष्टिक्रम से असम्भव है।
25. घर के लोगों के शत्रु घर के लोगों को बनाना, यह श्रेष्ठ पुरुष का काम नहीं।
26. जो परमेश्वर का नियम है उसको कोई तोड़ सकता है?
27. जो परमेश्वर भी नियम को उलटा पलटा करे तो उसकी आज्ञा को कोई न माने और वह भी सर्वज्ञ और निर्भ्रम न रहे।
28. ईश्वर भी पूर्वकृत नियम को उलटा नहीं कर सकता क्योंकि वह सर्वज्ञ और उसके सब काम बिना भूल–चूक के हैं।
29. जैसे बड़ी–बड़ी और बहुत मच्छियों को जाल में फँसाने वाले की प्रतिष्ठा और जीविका अच्छी होती है, ऐसे ही जो बहुतों को अपने मत में फँसा ले उसकी अधिक प्रतिष्ठा और जीविका होती है। इसी से ये लोग जिन्होंने वेद और शास्त्रों को न पढ़ा, न सुना उन बिचारे भोले मनुष्यों को अपने जाल में फँसा के उसके माँ–बाप, कुटुम्ब आदि से पृथक् कर देते हैं। इससे सभी विद्वान् आर्यों को उचित है कि स्वयम् इनके भ्रमजाल से बच कर अन्य अपने भोले भाइयों को बचाने में तत्पर रहें।
30. जो यह किसी कवि ने लिखा है सत्य है कि – **'क्षणे रुष्टः क्षणे तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे। अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयंकरः।।'** – जैसे कोई मनुष्य क्षण में प्रसन्न, क्षण में अप्रसन्न होता है, अर्थात् क्षण–क्षण में प्रसन्न–अप्रसन्न हो उसकी प्रसन्नता भी भयदायक होती है।
31. ईश्वर के लिए मनुष्य और पशु–पक्षी आदि सभी जीव पुत्रवत् हैं।
32. बिना अपराध किसी को दण्ड देना अन्यायकारी बात है।
33. नियोग की बातें सब देशों में चलती थीं।
34. मुर्दों के गाड़ने से संसार को बड़ी हानि होती है क्योंकि वह सड़ कर वायु को दुर्गन्धमय बनाता है और रोग फैलाता है।
35. सबसे बुरा (मृतक को) गाड़ना है, उससे कुछ थोड़ा बुरा जल में डालना, क्योंकि उसको जलजन्तु उसी समय चीर–फाड़ कर खा लेते हैं परन्तु जो कुछ हाड़ व मल, जल में रहेगा तो वह सड़कर जगत् के लिए दुःखदायक होगा। उससे कुछ थोड़ा बुरा जंगल में छोड़ना है क्योंकि उसको मांसाहारी पशु–पक्षी लुंचा खायेंगे तथापि जो उसके हाड़, हाड़ की मज्जा और मल सड़ कर जितना दुर्गन्ध करेगा उतना जगत् का अनुपकार होगा; और जो जलाना है वह सर्वोत्तम है क्योंकि उसके सब पदार्थ अणु होकर वायु में उड़ जाएँगे।
36. जो अविधि से (मृतक को) जलाएँ तो थोड़ा–सा (दुर्गन्ध) होता है, परन्तु गाड़ने आदि से बेहतर है और जो विधिपूर्वक जैसा कि वेद में लिखा है, ..उस प्रकार से दाह करें तो कुछ भी दुर्गन्ध न हो, किन्तु इसी का नाम अन्त्येष्टि, नरमेध, पुरुषमेध यज्ञ है। जो दरिद्र हो तो भी बीस सेर से कम घी चिता में न डालें, चाहे वह भीख माँगने व जाति वाले के देने अथवा राज से मिलने से प्राप्त हो, परन्तु उसी प्रकार दाह करें।
37. जो घृतादि किसी प्रकार न मिल सके तथापि गाड़ने आदि से या केवल लकड़ी से भी मृतक को जलाना उत्तम है क्योंकि एक विश्वा भर भूमि में अथवा एक वेदी में लाखों–करोड़ों मृतक जल सकते हैं। भूमि भी गाड़ने से बिगड़ती है और कबर देखने से भय भी होता है। इसलिए गाड़ना आदि सर्वथा निषिद्ध है।
38. जो यह खतनः करना ईश्वर को इष्ट होता तो उस चमड़े को आदि सृष्टि में बनाता ही नहीं और जो यह बनाया गया है वह रक्षार्थ है, जैसे आँख के ऊपर का चमड़ा। क्योंकि वह गुप्त स्थान अति कोमल है। जो उस पर चमड़ा न हो तो एक कीड़ी (चींटी) के भी काटने और थोड़ी–सी चोट लगने से बहुत दुःख हो और यह लघुशंका के पश्चात् कुछ मूत्रांश कपड़ों में न लगे इत्यादि बातों के लिये है। इसे काटना बुरा है।
39. सज्जन लोगों को मद्य पीने का नाम भी न लेना चाहिए।
40. वेदोक्त परमेश्वर सब पाप, क्लेश, दुःख, शोकादि से रहित 'सच्चिदानन्दस्वरूप' है।
41. जब सारी पृथ्वी पर एक भाषा और बोली होगी उस समय सब मनुष्यों को

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

भारत भाग्य विधाता ऋषि दयानन्द

● मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द जी का बलिदान 135 वर्ष पूर्व हुआ था। इस अवधि में उनके अनुयायियों एवं आर्यसमाज ने जो कार्य किये हैं उसमें अनेक सफलतायें हैं। ऋषि दयानन्द को हम इसलिये भी स्मरण करते हैं कि उन्होंने हमें असत्य का परिचय कराकर सत्य ज्ञान, सत्य सिद्धान्त व मान्यताओं व जीवन को श्रेष्ठ व सफल बनाने वाले कर्तव्यों व अनुष्ठानों से परिचित कराया था। एक बार उनके समय के भारत की स्थिति पर विचार कर लेना उचित होगा। प्रथम बात यह है कि ऋषि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने से पूर्व देश घोर अविद्या व अन्धविश्वासों से ग्रस्त था। ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप से वह अपरिचित हो गया था। जब ईश्वर का सत्य स्वरूप ही लोगों को पता नहीं था तो सत्य उपासना भी वह नहीं जान सकते थे। देश भर में अविद्या पर आधारित मिथ्या परम्परायें प्रचलित थीं, जिनसे हमारा देश व समाज दिन प्रतिदिन निर्बल व रूग्ण हो रहा था। महर्षि दयानन्द के समय में देश अंग्रेज़ों का गुलाम था। इससे पूर्व यह यवनों व मुसलमानों का गुलाम रहा। सबने इसका शोषण किया और अमानवीय अत्याचार करने के साथ धर्मान्तरण किया। इस गुलामी का कारण भी अविद्या ही मुख्य था। इस गुलामी के कारण वैदिक धर्म व संस्कृति मिट रही थी और ईसाईयत का प्रचार व प्रसार हो रहा था।

इन विपरीत परिस्थितियों में देश, धर्म और संस्कृति की रक्षा करने का दायित्व ऋषि दयानन्द ने अपने ऊपर लिया और प्रथम उपाय के रूप में वेद, धर्म और संस्कृति का प्रचार आरम्भ किया। वह असत्य व मिथ्या मत एवं उनकी मान्यताओं का खण्डन एवं विद्या की बातों, सत्य सिद्धान्तों एवं वैदिक मान्यताओं का मण्डन करते थे। हरिद्वार के कुम्भ के मेले में भी उन्होंने पाखण्डों का खण्डन किया था और हरिद्वार में पाखण्ड खण्डिनी पताका भी फहराई थी। पौराणिक नगरी काशी में जाकर उन्होंने वहाँ भी पाखण्ड एवं मूर्तिपूजा आदि मिथ्या अवैदिक मान्यताओं का खण्डन किया था। इससे मिथ्या मतों के आचार्यों में खलबली मच गई थी परन्तु सभी मिथ्या मतों के आचार्यों में इतनी योग्यता नहीं थी कि वह सत्य को स्वीकार करें अथवा ऋषि दयानन्द की मान्यताओं को असत्य व वेद विरुद्ध सिद्ध करें। इसका परिणाम सन् 16 नवम्बर, 1869 को मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ के रूप में सम्मुख आया। पौराणिक आचार्यों के रूप में लगभग 30 से अधिक काशी के शीर्ष आचार्यों ने अकेले स्वामी दयानन्द जी से शास्त्रार्थ किया। यह सभी आचार्य मूर्तिपूजा, अवतारवाद आदि के समर्थन में वेद का कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर सके। स्वामी दयानन्द जी का प्रचार जारी रहा। वह देश के अनेक राज्यों व उनके नगरों में जाकर वेदों का प्रचार करने लगे। सर्वत्र लोग उनके शिष्य बनने लगे। शिष्यों में अधिक संख्या पठित, शिक्षित व ज्ञानी लोगों की हुआ करती थी। **सन् 1875 के अप्रैल महीने की 10 तारीख को लोगों के आग्रह पर स्वामी दयानन्द जी ने मुम्बई नगरी के गिरिगाँव मुहल्ले में आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य वेद और वेदानुकूल सिद्धान्तों एवं मान्यताओं सहित वैदिक जीवन शैली का प्रचार तथा पाखण्ड एवं अन्धविश्वासों सहित मिथ्या व अवैदिक सामाजिक परम्पराओं का उन्मूलन करना था।**

स्वामी दयानन्द जी मनुष्यों के भोजन पर भी ध्यान देते थे। वह शुद्ध अन्न से बने शुद्ध भोजन को करने के ही समर्थक थे। मांसाहार, मदिरापान, अण्डे व मछली आदि का सेवन तथा धूम्रपान आदि को वह धर्म की दृष्टि से अनुचित तथा आत्मा को दूषित करने वाला मानते थे। देश को जातिवाद से मुक्त करने का भी स्वामी जी ने प्रयत्न किया। उन्होंने वैदिक काल में प्रचलित वैदिक वर्णव्यवस्था, जो गुण कर्म व स्वभाव पर आधारित थी, उसके सत्यस्वरूप को देश व समाज के सामने रखा। देश के पतन मुख्य कारण अज्ञान व अन्धविश्वास ही थे। स्वामी जी ने अज्ञानता व अशिक्षा दूर करने के लिए गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया और उस पर विस्तार से चिन्तन प्रस्तुत किया। इसी का परिणाम कालान्तर में गुरुकुल एवं दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज व स्कूलों की स्थापना के रूप में सामने आया। भारत के शिक्षा जगत में यह एक प्रकार की क्रान्ति थी। हमारे पौराणिक भाई नारी शिक्षा का विरोध करते थे। ऋषि दयानन्द ने नारी शिक्षा की वकालत की और बताया कि विवाह गुण, कर्म व स्वभाव की समानता से होता है। अतः नारी का भी पुरुष के समान शिक्षित व विदुषी होना आवश्यक है। नारी यदि शिक्षित होगी तभी उसकी सन्तानें भी शिक्षित व संस्कारित हो सकेंगी। समाज ने ऋषि दयानन्द के इस विचार को अपनाया, जिसका परिणाम हम आज देख रहे हैं कि शिक्षा जगत में नारियों की उपलब्धियाँ पुरुष वर्ग से अधिक देखने को मिलती है। स्वामी दयानन्द जी ने समाज सुधार का जो कार्य किया वह एकांगी न होकर सर्वांगीण था। स्वामी दयानन्द नारी को संस्कारित और वेद विदुषी बनाना चाहते थे। बहुत सी नारियाँ वेद विदुषी बनी और आज भी गुरुकुलों का संचालन कर रही हैं। इसके विपरीत पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के प्रभाव में, विवेक के अभाव में बहुत सी नारियों ने भारतीयता की उपेक्षा कर पाश्चात्य नारी के स्वरूप को ग्रहण कर लिया। जहाँ मनुष्य की भौतिक उन्नति तो कुछ-कुछ होती दिखाई देती हैं परन्तु आध्यात्मिक उन्नति प्रायः शून्य ही होती है, जिसका परिणाम जन्म जन्मान्तरों में दुःख के सिवा कुछ होता नहीं है। यह भी बता दें कि स्वामी दयानन्द जी और उनके अनुयायियों वा आर्यसमाज ने जन्मना जातिवाद को समाप्त करने के क्षेत्र सहित दलितोद्धार का भी महान कार्य किया है।

अज्ञान व अन्धविश्वास सहित पाखण्डों का खण्डन करते हुए स्वामी दयानन्द जी ने मूर्तिपूजा, अवतारवाद, जन्मना जातिवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, अज्ञान व अविद्या के सभी कार्यों का खण्डन किया। स्वामी जी ने विद्या का प्रचार व प्रसार करने के लिये सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, ऋग्वेद-यजुर्वेद का संस्कृत-हिन्दी भाष्य, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया जिससे देश में अविद्या का प्रसार कम होकर विद्या का प्रसार न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी हुआ। स्वामी दयानन्द जी ने अविद्या को दूर करने व सर्वत्र वैदिक मान्यताओं के अनुसार समाज व परिवार बनाने के लिये आर्यसमाज की स्थापनायें कीं। सर्वत्र साप्ताहिक सत्संग होने लगे जहां प्रातः यज्ञ-अग्निहोत्र, ईश्वर भक्ति के गीत व भजन तथा विद्वानों के ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप का प्रचार, समाजोत्थान व देशोत्थान की प्रेरणा, मिथ्या मान्यताओं का खण्डन एवं सत्य सिद्धान्तों का मण्डन व प्रचार होता था। ऋषि दयानन्द ने पूरे विश्व को सर्वोत्तम व श्रेष्ठतम उपासना पद्धति भी दी है या यह कह सकते हैं कि वैदिक काल में योग की रीति से जो उपासना की जाती थी, उसका उन्होंने पुनरुद्धार किया। सन्ध्या में किन मन्त्रों से व किस विधि से उपासना की जाये, इस पर न केवल चारों वेदों के चुने हुए मन्त्रों से संकलित उपासना की विधि बताई अपितु अपने सभी ग्रन्थों में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना पर व्यापक रूप से प्रकाश भी डाला।

आध्यात्म व सामाजिक जगत् के उन्नयन व उत्कर्ष का ऐसा कोई कार्य व उपाय नहीं था जिसका उल्लेख स्वामी दयानन्द जी ने न किया हो व जिसको प्रचलित करने के लिए उन्होंने व उनके अनुयायियों ने कार्य न किया हो। स्वामी दयानन्द जी ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने स्वराज्य प्राप्ति का उद्घोष अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में किया था। ऐसा अनुमान है कि सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के ग्यारहवें समुल्लास में अंग्रेजों का तीव्र शब्दों में विरोध ही उनकी मृत्यु के षडयन्त्र का एक कारण बना था। इसकी विस्तार से चर्चा न कर हम पाठकों से अनुरोध करेंगे कि वह सत्यार्थ प्रकाश का आठवाँ समुल्लास व ग्यारहवें समुल्लास सहित आर्याभिविनय, संस्कृत वाक्य प्रबोध एवं व्यवहारभानु आदि सभी ग्रन्थों को पढ़ें। हिन्दी को देश की व्यवहार व राजकाज की भाषा बनाने और गोवध बन्द करने के लिये **भी ऋषि दयानन्द ने अंग्रेज़ों की गुलामी के दिनों में अग्रणीय भूमिका निभाई थी।** जिन दिनों ऋषि दयानन्द यह कार्य कर रहे थे तब गाँधी जी बच्चे थे और अन्य बड़े राजनीतिक नेताओं का जन्म भी नहीं हुआ था। देश की आजादी के क्रान्तिकारी व अहिंसक आन्दोलनों में भाग लेने वालों में आर्यसमाज के अनुयायियों की संख्या सबसे अधिक थी। अंग्रेज़ भी इस तथ्य से परिचित थे और इसी कारण उन्होंने पटियाला के आर्यसमाज व अन्यत्र भी आर्यसमाज के सदस्यों के उत्पीड़न के कार्य किये। स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, राम प्रसाद बिस्मिल आदि ऋषि दयानन्द के समर्पित अनुयायी थे। देश से स्त्री व पुरुषों की अशिक्षा को दूर कर शिक्षा का प्रचार व प्रसार करने में आर्यसमाज की अग्रणीय एवं प्रमुख भूमिका रही है। स्वधर्म एवं स्वसंस्कृति का बोध एवं प्रचार में भी आर्यसमाज का योगदान प्रमुख एवं सर्वाधिक है। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहाँ स्वामी दयानन्द ने अपना बौद्धिक योगदान न किया हो। **स्वामी दयानन्द जी वस्तुतः विश्व गुरु थे। इसके साथ ही वह भारत के निर्माता और भाग्य विधाता भी सिद्ध होते हैं।**

हम ऋषि दयानन्द की महान आत्मा को अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं। आज देश के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं। इन चुनौतियों को परास्त करने के लिये सभी ऋषि भक्तों को आलस्य का त्याग कर वेद प्रचार को जन-जन और घर-घर तक पहुँचाना होगा। सत्य के प्रचार में ईश्वर हमारा सहायक होगा और हमें सफलता अवश्य मिलेगी। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001
मो. 09412985121

जीवन की कहानी

● भद्रसेन

जो कोई भी जब भी इस संसार में आँख खोलता है, जीवन जीता है। वह सारा जीवन सूर्य की ऊर्जा–उषा–उष्मा, वायु, जल, पृथिवी आदि की उपस्थिति में ही जीता है। ये भौतिक पदार्थ मेरे आप जैसों के रचे हुए नहीं हैं। हाँ, ये अपने आप को किसी की व्यवस्था में बन्धे हुए अवश्य सिद्ध कर रहे हैं।

हमारी परम्परा के अनुसार उसी व्यवस्थापक की व्यवस्था में ही हमारा जीवन है। जिसका अर्थ है – साँस लेने से जुड़ी हुई सारी बातें अर्थात् शरीर–इन्द्रियाँ अन्तःकरण और आत्मा का सम्बन्ध भी परमात्मा की व्यवस्था से ही होता है। आत्मा के साथ शरीर आदि का सम्बन्ध होने पर ही जीवन के रूप में साँस लेना, खाना–पीना, देखना, सोचना आदि के सारे व्यवहार होते हैं। प्रभु के सूर्य, वायु, जल आदि भौतिक पदार्थों के भण्डारे, सबके लिए एक सी खुली हुई हैं, जो जितना, जब लेना चाहे ले सकता है। इनमें दाता की ओर से कोई अन्तर, भेद नहीं है।

परस्पर अन्तर का आधार –

संसार में सभी प्रकार के प्राणियों के शरीर, चोले मनुष्य, पशु, पक्षी, कृमि आदि के रूप में अलग–अलग हैं। उनमें आपस का बहुत प्रकार का अन्तर है। यह फर्क, भेद क्यों हैं? हमारे शास्त्र बड़े विस्तार से इसको समझाते हुए कहते हैं, कि ईश्वर तो पूर्ण न्यायकारी है। कर्मफलदाता का न्याय बिना आधार के अलग–अलग नहीं हो सकता। उसमें कोई तो भेद का कारण होगा? जिस के आधार पर कर्मफल दाता कर्मों का फल बाँटता है। तभी तो हमारे शास्त्र बार–बार समझाते हैं–'जैसी करनी–वैसी भरनी', जैसा कर्म करे– वैसा फल दे भगवान, कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।

इसीलिए हम भारतीय दो–चार भी जहाँ–कहीं, जब–कभी इकट्ठे होते हैं और सुख–दुख, कुछ प्राप्त करने–खोने, रोग–शोक, कष्ट–क्लेश की बात करते हैं तो अन्त में आकर यही बात पूर्ण होती है कि यह सब कर्मों का लेखा है, भाग्यचक्र ही ऐसा है।

कर्म –

ये कर्म प्रत्येक आत्मा–शरीर, इन्द्रियों, मन इन तीनों, दो के मेल से या किसी एक (मन) के द्वारा करता है। फिर कर्म–फलदाता उस–उस कर्म के अनुरूप देह, अन्तःकरण, इन्द्रियाँ, भौतिक पदार्थ आदि के रूप में उस–उस स्तर पर उस–उस कर्म का फल देता है। तभी तो हम देखते हैं, किसी के शरीर में कोई कमी होती है, तो किसी के अन्तःकरण में अधूरापन होता है, तो किसी की किसी ज्ञान या कर्म इन्द्रिय में विकार होता है, जिससे वह उस–उस कमी के कारण कष्ट प्राप्त करता है।

शुभ–अशुभकर्म –

कुछ कर्मों के करने पर कुछ को लाभ होता है और कुछ से कुछ को नुकसान, हानि होती है। जैसे कि एक चिकित्सक के इलाज से रोगी का कष्ट दूर होता है और चोरी, डाके, मार–पीट से भुक्तभोगियों को नुकसान उठाना पड़ता है। जिन कर्मों से किसी का भला होता है, वे कर्म शुभ, अच्छे कहलाते हैं और जिन कर्मों से दूसरों को हानि, कष्ट उठाना पड़ता है, वे कर्म अशुभ, बुरे कहलाते हैं। इन्हीं को ही धर्म–अधर्म, पुण्य–पाप शब्दों से भी समझाया जाता है।

हम अपने चारों ओर यही देख रहे हैं कि हर क्षण, हर तरह के शुभ–अशुभ कर्म हो रहे हैं। अधिकतम कर्म करने वाले अपनी–अपनी इच्छा, मनमर्जी से उस–उस कर्म को करते हैं। जैसे कि किसी पगड़ी की रस्म पर आने वाले जब–जब आते हैं, वे अपनी–अपनी इच्छा से तब–तब आते हैं अर्थात् जिसके मन में समवेदना प्रकट करने की बात आती है, वह तब अपनी मर्जी से वहाँ पहुँचता है। हम अपने जीवन व्यवहार में देखते हैं कि हम अपनी इच्छा से वह–वह कर्म करते हैं। वैसे परमात्मा सबका एक–सा परमपिता है, अतः वह सर्वज्ञ, सब का ही पूर्ण हित चाहता है। इसीलिए हम देखते हैं कि ईश्वर की दी हुई सूर्य, धरती जैसी भौतिक चीजें सभी के लिए एक–सी हैं। ईश्वर की ओर से उनमें किसी के लिए किसी प्रकार का अन्तर नहीं होता है।

कर्मफल में अन्तर –

कर्मफलदाता प्राणियों के शरीरों में जो अन्तर करता है। वह–वह अन्तर उन–उनके अपने कर्मों, लेखों, भाग्यों के अन्तर के कारण ही होता है। ईश्वर की अपनी इच्छा से अन्तर नहीं होता है। तभी तो यह कहा जाता है–

मेरे दाता के दरबार में, सब लोगों का खाता
जैसा जो कोई कर्म करे, वैसा ही फल पाता।।

क्या साधु क्या सन्त गृहस्थी क्या राजा क्या रानी।
प्रभु के खाते में लिखी है, सब की कर्म कहानी।।

संसारी बैंक में अनेकबार कुछ अपने स्वार्थवश बेईमानी, हेरा–फेरी कर लेते हैं। पर

नहीं चले उसके घर भैय्या रिश्वत और चालाकी।
उसके अपने लेन–देन की रीत बड़ी बाकी।।

किसी को कौड़ी कम नहीं देता न किसी को ज्यादा।
जैसा जो कोई करता, वैसा ही फल पाता।।

अर्थात् अपने–अपने कर्मों के अनुसार कर्मफलदाता हमें विविध रूपों में जीवन देता है। मनुष्य जीवन में अपने जीवन (की कहानी – हम सब) को अधिकतम अपनी इच्छा के अनुसार चलाने का अवसर प्राप्त होता है।

182, शालीमार नगर,
होशियारपुर 146001

☞ पृष्ठ 01 का शेष

भगवान शंकर और दयानन्द

परन्तु उपनिषदों में क्या है? उपनिषदों के ज्ञान को जिन मुसलमान सन्तों ने प्राप्त किया उन्होंने अपने यहाँ एक नवीन मत आरम्भ किया, जिसे सूफ़ी मत कहते हैं। वेदान्त का फ़ारसी अनुवाद 'तसव्वुफ़' है, वेदान्त का मोती। इन सूफ़ियों ने तीन शब्दों में बताया कि जिस ज्ञान की वे बातें करते हैं उसमें क्या है? ये तीन शब्द हैं– चे, चूँ, चिरा। इनका अर्थ है– क्या? क्यों? कैसे? उपनिषद् बताते हैं कि मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? कैसे आया हूँ? क्यों आया हूँ? कहाँ जाऊँगा?

परन्तु आज इन प्रश्नों के सम्बन्ध में विचार करने का अवकाश किसको है? आज तो यह दशा है कि–

आप अपने को ढूँढ़ता हूँ मैं।
मुझको मेरा पता नहीं मिलता।।

और इसलिए नहीं मिलता कि ढूँढ़ने का या तो प्रयत्न नहीं होता अथवा उल्टे मार्ग से होता है। अपने–आप को ढूँढ़ने का प्रयत्न और प्रयत्न का ठीक मार्ग ही उपनिषदों का विषय है। याज्ञवल्क्य जब संन्यास लेने लगे तो लोगों ने पूछा, "किसलिए आप संन्यास लेते हैं?" याज्ञवल्क्य बोले, "एक तो इसलिए कि एक विशेष आयु के पश्चात् संन्यास–आश्रम में चला जाना आर्य–मर्यादा है, दूसरे इसलिए कि आत्मा के दर्शन कर सकूँ, क्योंकि आत्मा के दर्शन किये बिना जो मर जाता है, उसका महानाश होता है।" यह बात केवल याज्ञवल्क्य ऋषि ने ही नहीं कही, दूसरे ऋषि और महात्माओं ने भी कही है। धन–उपार्जन करना चाहते हो करो, भवन–निर्माण करना चाहते हो अवश्य करो। सन्तान, शक्ति, शासन, जिसकी इच्छा है उसे प्राप्त करो, यत्न करने से सब–कुछ मिलता है। परन्तु सुनो! सुनो! सुनो! ये सब वस्तुएँ नष्ट होने वाली हैं। यदि तुमने आत्मा को नहीं जाना तो सर्वनाश हो जायेगा।

महर्षि प्रजापति ने जब यह बात कही, जब घोषणा की कि आत्मा को जाने बिना सर्वनाश होता है, तब देवताओं के नेता इन्द्र और राक्षसों के नेता विरोचन दोनों उनके पास गये; बोले, "हम आतमा को जानना चाहते हैं।" प्रजापति ने कहा, "25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण करके मेरे आश्रय में रहो, उसके पश्चात् बात करूँगा।"

आजकल किसी को ऐसी बात कहिये तो वह कहेगा कि घर में बैठो, मुझे आत्मा को नहीं जानना है जिसके लिए 25 वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़े। एक दिन मैं आर्य समाज हनुमान रोड में ठहरा था। एक दिन पूर्व आत्मा के सम्बन्ध में भाषण भी दिया था। प्रातः के समय द्वार पर एक नवयुवक आकर खड़ा हो गया कोट, पतलून, बूट पहने; द्वार पर खड़ा–खड़ा बोला, "स्वामीजी! नमस्ते।" मैंने कहा, "नमस्ते मेरे भाई! कहो, मैं तुम्हारी क्या सेवा करूँ?" वह बोला, "रात्रि को आप आत्मा की बात कर रहे थे न, मेरे हृदय पर उसका बहुत प्रभाव हुआ। मैं आत्मा को जानने के लिए आया हूँ।" मैंने कहा, "वहाँ द्वार पर खड़े–खड़े ही आत्मा का दर्शन करना चाहते हो? वह बोला, "जी, मुझे दफ़्तर जाना है, समय बहुत थोड़ा है, आप शीघ्र बता दीजिये।" मैंने कहा, "भोले भाई, आत्मा का दर्शन करना आसान नहीं, उसमें बहुत समय लगता है।" वह बोला, "यह आप किसी प्राचीन समय की बात कर रहे हैं। विज्ञान ने इतनी उन्नति कर ली, संसार इतना आगे बढ़ गया, एक स्विच दबाने से सारे मकान की बत्तियाँ जल जाती हैं। भारतवर्ष के लोग क्या ऐसा कोई उपाय न खोज सके कि झट आत्मा के दर्शन हो जायें?" मैंने कहा, "योगियों ने बहुत–कुछ किया है, परन्तु स्विच से बत्तियाँ जलने की जो बात तुम कहते हो, क्या उससे पूर्व क्या करना पड़ता है, यह भी जानते हो? स्विच दबाने से बत्तियाँ जलती हैं अवश्य, परन्तु उससे पूर्व एक पॉवर–हाऊस तैयार करना पड़ता है। पॉवर–स्टेशन से अपने घर तक तारें लगानी पड़ती हैं। ठीक विधि से उन्हें जोड़ना पड़ता है। फिर बल्व लगाने पड़ते हैं। पावर–स्टेशन से बिजली आये, उसके लिए शुल्क देना पड़ता है। सब–कुछ होने के पश्चात् स्विच दबाने से बत्तियाँ जलती हैं। तुम भी उस महान् पॉवर–स्टेशन से अपनी तार जोड़ लो। अपने बल्व ठीक प्रकार से लगा लो। उसके पश्चात् जब भी स्विच दबाओगे, तब प्रकाश होगा अवश्य। तारें लगाये बिना स्विच को एक बार नहीं सहस्रों बार दबाते रहो, न कमरे में बत्ती प्रकाशित होगी न मन की।"

क्रमशः

कहाँ जा रहे हैं आप

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

अचानक मुझे पीछे से एक आवाज़ सुनाई पड़ी। मैंने मुड़ कर पीछे देखा तो सर्व कर्म नियन्ता यमाचार्य (जिन्हें लोग डरकर यमराज भी कहते हैं।) मुझे मुस्कराते हुए दृष्टिगत हुए। मुझे ऐसा लगा कि हमारा जन्म–जन्मान्तर का साथ है। मैंने व उन्होंने एक–दूसरे को प्रणाम किया और कहा,

"महाराज, जाना कहाँ, जीवन के सत्तर वसन्त पूरे हो गये। अब जीर्ण–शीर्ण शरीर को छोड़ कर सूक्ष्म शरीर से अन्तरिक्ष में विचरण कर रहा हूँ। सौभाग्य से आपके दर्शन हो गए यह मेरे लिए प्रसन्नता की बात है।"

"यह तुम्हारा सौभाग्य है या दुर्भाग्य, यह तो बाद में तुम्हें पता चल ही जाएगा, फिलहाल इतना बता दो कि तुम कहाँ से आ रहे हो?" यमाचार्य ने दूसरा प्रश्न दाग दिया।

"जी, मैं पृथ्वी लोक के वानप्रस्थ आश्रम से आ रहा हूँ।"

"तुम आश्रम में करते क्या थे?"

"मैं आश्रम में रहता था और साधना करता था।"

"तुम आश्रम में रहते थे या साधना करते थे?"

"मैं आश्रम में रहता था और साधना भी करता था।" मैंने उत्तर दिया।

"रहना और बात है और साधना करना दूसरी बात है। रहने के लिए तो तुम घर में भी रह सकते थे जहाँ तुम्हें सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हो सकती थीं। अतः केवल रहने के लिए तुम आश्रम नहीं आए। जहाँ तक साधना का प्रश्न है, यदि तुम साधक हो तो उसका प्रतिफल भी दृष्टिगत होना चाहिए, तुम्हारे चेहरे पर आध्यात्मिक शान्ति होनी चाहिए।" यमाचार्य ने मेरी बात को उलट–पुलट कर दिया।

"तो फिर आप ही बता दीजिए कि मैं आश्रम में क्या करता था?" मैंने उद्विग्न होकर कहा।

"प्रश्न आपके जीवन से सम्बन्धित है, समाधान भी तुम्हें खुद ढूँढ़ना चाहिए। अच्छा अब यह बताओ कि तुम्हें अब जाना कहाँ है?"

"मुझे कुछ नहीं पता कि कहाँ जाना है?"

"तो सुनो, मैं बताता हूँ। यहाँ एक तिराहा है–एक रास्ता स्वर्ग लोक ले जाता है, दूसरा नरक के द्वार तक जाता है तो तीसरा मनुष्य लोक तक जाकर ठहर जाता है। बोलो कहाँ जाओगे?"

"मैं स्वर्ग लोक जाना चाहता हूँ।" मैंने झिझकते हुए कहा।

"क्या तुम्हें स्वर्गलोक की जानकारी है?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं।" मैंने भोलेपन से कहा।

"कैसे विचित्र प्राणी हो, जाना चाहते हो स्वर्ग, पर वहाँ की कोई जानकारी नहीं। अरे भाई, मनुष्य लोक में भी यदि मनुष्य किसी शहर में जाता है तो उसकी थोड़ी बहुत जानकारी तो रखता है पर तुम तो पहली बार सूक्ष्म शरीर से विशाल स्वर्ग लोक जा रहे हो, पर तुम्हें वहाँ की रत्तीभर भी जानकारी नहीं। क्या स्वर्ग में कोई तुम्हारा जानकार है?"

"नहीं महाराज, कोई नहीं।" मैंने रुआँसे स्वर में कहा।

"क्या तुम पढ़े–लिखे हो?"

"थोड़ा–थोड़ा।"

"संस्कृत का ज्ञान है?"

"बिल्कुल नहीं।"

"तो सुनो, जिस लोक में तुम जाना चाहते हो उस लोक के मनुष्यों की तुम्हें पहचान बता रहा हूँ–

स्वर्ग स्थितानामिह जीवलोके चत्वारि
चिह्नानि भवन्ति देहे।
दान प्रसंगो मधुरा च वाणी, देवार्यनं
ब्राह्मण तर्पणं वा।।

अर्थात् स्वर्ग में रहने वाले प्राणियों के चार चिह्न होते हैं। वे दानशील होते हैं, उनकी वाणी में माधुर्य होता है, वे ईश्वर भक्त और विद्वानों के सेवक होते हैं। अब बताओ, यदि तुम स्वर्ग के अभिलाषी हो तो क्या कभी तुमने दान दिया है, क्या तुम्हारी वाणी में मिठास है, क्या तुम्हारी ईश्वर के प्रति आस्था है?"

"यमाचार्य जी, मैं झूठ नहीं बोलूँगा। मैंने कभी–कभार ही दान दिया है, वाणी से भी कभी–कभी कठोर वचन भी बोल जाता हूँ। विद्वानों की सेवा करने का भी मौका नहीं मिला।"

"तो बोलो, क्या उस अनजाने लोक में जाना चाहोगे?" यमाचार्य ने मुझे मझधार में छोड़ दिया।

"महाराज आप ही मुझे कोई रास्ता बताइये।" मैं अपने हाथ से फिसलते स्वर्ग को नहीं छोड़ना चाहता था।

"हाँ, दूसरा रास्ता नरक है। नरक में रहने वाले लोगों के भी लक्षण सुन लो–

स्वर्गच्युतानामिह जीव लोके चत्वारि
चिह्नानि भवन्ति देहे।
कार्पण्य वृत्ति स्वजनस्य निन्दा
दुश्शीलता असाधु सेवनम्।।

अर्थात् स्वर्ग से भ्रष्ट नारकीय जीवन जीने वाले व्यक्ति स्वभाव से कंजूस होते हैं, वे अपने सम्बन्धियों की निन्दा करने में नहीं चूकते, वे चरित्रहीन होते हैं तथा दुर्जनों की संगति में रहते हैं।

बोलो, क्या तुम्हारे स्वभाव में, नरक गामियों के लक्षण घटित होते हैं?"

"हाँ, मैं थोड़ा बहुत कंजूस तो हूँ ही, कभी–कभी किसी की निन्दा करने में भी नहीं चूकता। मेरा चरित्र भी बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता। दुष्ट व्यक्तियों के साथ भी मेरा मेल–जोल बना रहता है।" मुझे अपने दोष प्रकट करने में संकोच नहीं हुआ।

"बड़ा विचित्र स्वभाव है आपका। सपने पाले हुए हैं स्वर्ग के और काम करते हैं नरक के। जहाँ जाना चाहते हैं वहाँ का ज्ञान नहीं और जहाँ नहीं जाते उसी के अवगुणों को सीने में चिपकाये फिर रहे हो।" यमाचार्य ने मुझे टोकते हुए कहा।

"तो फिर करूँ क्या? स्वर्ग में जा नहीं सकता और नरक में जाना नहीं चाहता। तो कोई तीसरा रास्ता है?"

"हाँ, तीसरा रास्ता भी है और वह रास्ता मनुष्य लोक को जाता है। संस्कृत में कहा गया है –

येषां न विद्या तपो न दानं ज्ञानं न
शीलं गुणों न धर्म।
ते मर्त्यलोके भुविभार भूताः मनुष्य
रूपेण मृगाश्चरान्ति।।

अर्थात् जिनके पास विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, गुण और धर्म नहीं है वे इस मनुष्य लोक के भार बनकर मनुष्य के रूप पशुओं के समान विचरण करते हैं।

अब बोलो, तुम्हारे स्वभाव में ज्ञान, तप, दान, शील, गुण आदि मनुष्य लोक की विशेषताएँ है?"

"नहीं यमाचार्य जी, न तो मुझे मनुष्य लोक में जीना आया और न स्वर्ग लोक के गुणों को संजोकर रख सका और जिन नारकीय दुर्गुणों को मैं ढो रहा हूँ वहाँ मैं जाना नहीं चाहता। अब आप ही मेरा मार्ग दर्शन कीजिए।"

"वत्स, स्वर्ग या नरक की कल्पना, ये सब सकाम कर्म हैं। तुम स्वर्ग और नरक के चक्कर में पड़ते ही क्यों हो? निष्काम भाव से कर्म करो। निष्काम कर्म के सम्मुख स्वर्ग और नरक छोटे पड़ जाते हैं। **'न कर्म लिप्यते नरे'** यही वेद का संदेश है और यही गीता का सद्ज्ञान है।" यमाचार्य ने नचिकेता के समान मानो मुझे भी आत्मज्ञान वरदान दे दिया।

मैंने ही ज्यों ही श्रद्धाभिभूत होकर यमाचार्य को प्रणाम करने के लिए मस्तक झुकाया, मेरा मस्तक पलंग के पावे से टकरा गया, नींद टूट गई और सपना बिखर गया पर यह सपना जीवन की सच्चाई को प्रकट कर गया।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

☞ *पृष्ठ 04 का शेष*

सत्यार्थ प्रकाश ...

परस्पर अत्यन्त आनन्द प्राप्त हुआ होगा।

42. ईश्वर के तुल्य कभी कोई नहीं हो सकता।
43. गुण से द्रव्य कभी नहीं बन सकता, जैसे रूप से अग्नि और रस से जल नहीं बन सकता।
44. जो ईश्वर से जगत् बना होता तो ईश्वर के सदृश गुण, कर्म, स्वभाव वाला होता। उसके गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश न होने से यही निश्चय है कि ईश्वर से (जगत) नहीं बना किन्तु जगत् के (उपादान) कारण अर्थात् परमाणु आदि नाम वाले जड़ से बना है।
45. जो आप झूठा और दूसरे को झूठ में चलावे उसको शैतान कहना चाहिए।
46. बिना अवकाश के कोई भी पदार्थ स्थित नहीं हो सकता।
47. जो (ईश्वर) विभु (सर्वव्यापक) नहीं है तो वह जगत् की रचना, धारण, पालन और जीवों के कर्मों की व्यवस्था व प्रलय कभी नहीं कर सकता, क्योंकि जिस पदार्थ का स्वरूप एकदेशी है उसके गुण, कर्म, स्वभाव भी एकदेशी होते हैं, जो ऐसा है तो वह ईश्वर नहीं हो सकता। क्योंकि ईश्वर सर्वव्यापक, अनन्त गुण–कर्म–स्वभाव युक्त, सच्चिदानन्दस्वरूप, नित्य, शुद्ध–बुद्ध–मुक्त स्वभाव, अनादि, अनन्तादि लक्षणयुक्त वेदों में कहा है। उसी को मानो तभी तुम्हारा कल्याण होगा, अन्यथा नहीं।
48. सब मनुष्यों के लिए उचित है कि सब के मत विषयक पुस्तकों को देख–समझ कर कुछ सम्मति व असम्मति दें व लिखें, नहीं तो सुना करें। क्योंकि जैसे पढ़ने से पण्डित होता है वैसे सुनने से बहुश्रुत होता है। यदि श्रोता दूसरे को नहीं समझा सके तथापि आप स्वयं तो समझ ही जाता है।
49. जो कोई पक्षपातरूप या न रूढ़ हो कर देखते हैं उनको न अपने और न पराये गुण–दोष विदित हो सकते हैं।
50. मनुष्य की आत्मा यथायोग्य सत्याऽसत्य के निर्णय करने का सामर्थ्य रखती है। जितना अपना पठित व श्रुत है उतना निश्चय कर सकता है।
51. यदि एक मत वाले दूसरे मतवाले के विषयों को जाने और अन्य न जाने तो यथावत् संवाद नहीं हो सकता, किन्तु अज्ञानी किसी भ्रमरूप बाड़े में गिर जाते हैं।
52. जो सर्वमान्य सत्य विषय हैं वे तो सब (मतों) में एक से हैं। झगड़ा झूठे विषयों में होता है। अथवा एक सच्चा और दूसरा झूठा हो तो भी कुछ थोड़ा सा विवाद चलता है।
53. यदि वादी–प्रतिवादी सत्याऽसत्य निश्चय के लिये वाद–प्रतिवाद करें तो अवश्य निश्चय हो जाये।

8–17 टाऊनशिप, पो. नर्मदानगर, जि. भरूच, गुजरात–392015, मो. 9879528247

सर्वशास्त्र निष्णात : स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक

● डॉ. भवानी लाल भारतीय

कभी कभी यह कल्पना करना कठिन हो जाता है कि कोई बालक मात्र विद्याध्ययन के लिए अपने घर से सदा के लिए विदा ले लेता है, किन्तु ऐसा उदाहरण विविध शास्त्रीय विद्याओं में पारंगत स्वामी ब्रह्ममुनि के जीवन में मिलता है। अपनी आत्मकथा 'निज जीवन वृत्त वनिका' में उन्होंने लिखा है वे सहारनपुर जिले के ग्राम लखनौती में एक जमींदार वैश्य परिवार में श्री राजाराम के यहाँ फाल्गुन कृ. 13.1950 वि. तदनुसार ई. 1894 में जन्मे थे। बाल्यकाल में उनकी शिक्षा साधारण उर्दू की हुई, किन्तु सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन से वे आर्यसमाज के सिद्धान्तों की ओर आकर्षित हुए। उनके मामा ने भी वैदिक मत की ओर उनकी रुचि जगाई और एक दिन वे उच्चतर संस्कृत विद्या को हासिल करने के लिए और यह जानकर कि उनके परिजन इसके लिए उन्हें अन्यत्र जाने की आज्ञा नहीं देंगे, घर से भाग खड़े हुए। फलतः अष्टाध्यायी के अध्ययन की लालसा लेकर यह किशोर प्यारेलाल (यही उनका घर का नाम था) यायावर बना और सर्वदानन्द साधु आश्रम हरदुआगंज (अलीगढ़) जा पहुँचा, जहाँ स्वामी पूर्णानन्द नाम के एक संन्यासी छात्रों को अष्टाध्यायी पढ़ाते थे। यहाँ उन्हें ब्रह्मदत्त जिज्ञासु सहपाठी मिले जो खुद पंजाब में अपने ग्राम को छोड़कर विद्याध्ययन के लिए आये थे। उनके गुरु स्वामी पूर्णानन्द अत्यन्त कठोर प्रकृति के थे। पाठ में यदि कोई त्रुटि पाते तो छात्र को पीटने लगते। पिटने की इस क्रूरता से भयभीत होकर एक बार तो यह विद्यार्थी प्यारेलाल आश्रम से भाग निकला, परन्तु दुर्वासा गुरु पूर्णानन्द कहाँ पीछा छोड़नेवाला था? वह भगोड़े शिष्य के पीछे–पीछे गया और पीटते–पीटते उसे पुनः साधु आश्रम में ले आया। इस विचित्र किन्तु कष्टप्रद घटना का वर्णन खुद स्वामी ब्रह्ममुनि ने अपनी आत्मकथा में किया है। धन्य है ऐसे विद्या पिपासुओं की सहिष्णुता।

संस्कृत व्याकरण के उच्च अध्ययन के लिए प्यारेलाल (अब वे स्वयं को प्रियरत्न आर्ष के नाम से प्रख्यापित करते थे) काशी जा पहुँचे और वहाँ व्याकरण धुरीण पं. देवनारायण तिवारी से महाभाष्य का अध्ययन किया। अन्य विद्वानों से विविध शास्त्रों को भी पढ़ा। कुछ काल तक वे काशी विद्यापीठ में अध्यापक भी रहे। यहाँ उनके छात्रों में भारत के विगत प्रधानमंत्री पं. लालबहादुर शास्त्री भी थे। प्यारेलाल उर्फ प्रियरत्न को गृहस्थ तो बनना ही नहीं था। 2001 वि. में उन्होंने स्वामी वेदानन्द तीर्थ से संन्यास ले लिया और **'ब्रह्ममुनि परिव्राजक'** नाम धारण कर लिया। अध्ययन, लेखन तथा वेद–प्रचारार्थ भ्रमण उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य बन गया। प्रायः गर्मियों में वे मसूरी चले जाते और वहाँ लेखन कार्य में जुटे रहते। बाद में उन्होंने अपने ग्रन्थों के प्रकाशन का पूर्ण अधिकार 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' दिल्ली को दे दिया। ग्रन्थ प्रकाशन में आनेवाले व्यय के लिए उन्होंने प्रचुर धन राशि भी इस सभा को दी। ऐसा लगता है कि सभा ने उनके ग्रन्थों के प्रकाशन में पूरी रुचि नहीं दिखाई। स्वामी ब्रह्ममुनि द्वारा लिखित ग्रन्थों की संख्या काफी है और वे वेद, वेदांग, उपनिषद्, दर्शन तथा अन्य स्फुट विषयों को लेकर लिखे गये हैं। प्रारम्भ में उनके ग्रन्थ 'प्रिय ग्रन्थ माला' के अन्तर्गत छपे। बाद में इस ग्रन्थमाला को 'ब्रह्ममुनि ग्रन्थमाला' के नाम से प्रसिद्ध किया गया। उनके अनेक ग्रन्थ आर्य साहित्य मण्डल अजमेर तथा सार्वदेशिक सभा ने भी छापे। परोपकारिणी सभा ने उनसे ऋग्वेद के दशम मण्डल का भाष्य करवाया जो दो खण्डों में छपा। साथ ही उन्होंने ऋग्वेद के सातवें मण्डल के 61 सूक्त के मन्त्र 3 से 68 वें सूक्त तक का भाष्य किया, क्योंकि ऋषि दयानन्द का भाष्य 61वें सूक्त के दूसरे मन्त्र तक का ही था। इस भाष्य को भी परोपकारिणी सभा ने 1972 में प्रकाशित किया। गुरुकुल कांगड़ी ने उन्हें विद्यामार्तण्ड की उपाधि से सम्मानित किया। 16 दिसम्बर 1977 को शास्त्रों के इस दिग्गज विद्वान् का निधन हो गया। उनकी समस्त कृतियाँ निश्चय ही सौ के करीब हैं।

मेरे व्यक्तिगत संस्मरण

पं. प्रियरत्न आर्ष का प्रथम ग्रन्थ जो मैंने पढ़ा वह था–

वेदों में इतिहास नहीं। यह ग्रन्थ जहाँ तक मुझे स्मरण है आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर से छपा था। मैंने इसे अपने नगर के एक स्वाध्यायशील सज्जन श्री भैरवसिंह से लेकर पढ़ा। वेदों में आये आख्यानों और कथानकों की निरुक्त वर्णित पद्धति से व्याख्या कर लेखक ने स्पष्ट किया है कि वेदों में लौकिक इतिहास नहीं है तथा वैदिक आख्यानों में आये ऋषियों, राजाओं, नदियों तथा अन्य लौकिक प्रतीत होनेवाले नाम या उनसे जुड़ी कथाएँ वास्तविक न होकर आलंकारिक हैं। बाद में किसी समय स्वयं लेखक ने मुझे बताया था कि इसी ग्रन्थ की सामग्री के आधार पर पं. चमूपति ने अपनी पुस्तक 'यास्क युग की वेदार्थ शैलियाँ' (1992 वि. में प्रकाशित) लिखी।

स्वामी ब्रह्ममुनि से भेंट करने का एक अवसर तब आया जब वे जोधपुर आये। उन्होंने मुझे बताया कि सरप्रताप हाईस्कूल (जहाँ मैं 1949 से 1956 तक अध्यापक रहा था) के अध्यापक चरणदास अग्रवाल उनके फुफेरे भाई हैं। वे चाहते थे कि वे अपनी बुवाजी (मास्टर चरणदासजी की माता) से मिलें। मैं चरणदासजी के साथ उपर्युक्त सरप्रताप हाईस्कूल में अध्यापक रह चुका था। मैं उन्हें उक्त अध्यापक के राजरणछोड़ मन्दिर के पीछेवाले उनके मकान में लेकर गया, जहाँ स्वामीजी अपनी बुवा तथा अन्य परिजनों से मिलकर बड़े प्रसन्न हुए। वार्तालाप के प्रसंग में मुझसे मास्टर चरणदासजी ने अपने इस ममेरे भाई तथा संन्यासी बने ब्रह्ममुनिजी की चर्चा की थी।

अजमेर का संस्मरण– स्वामी ब्रह्ममुनि के अनके ग्रन्थ आर्य साहित्य मण्डल अजमेर ने छापे थे। मेरा एक प्रमुख ग्रन्थ **'श्रीकृष्ण चरित'** भी इसी प्रकाशक ने छापा था। एक बार जब मैं आर्य साहित्य मण्डल के श्रीनगर रोड स्थित कार्यालय (यहाँ उनका प्रेस फाइन आर्ट प्रिंटिंग प्रेस भी था) में गया तो देखा कि कार्यालय के प्रांगण में बनी एक छोटी कोठरी में स्वामीजी विराजमान हैं और कोयले की सिगड़ी पर रोटियाँ सेंक रहे हैं। मुझे आश्चर्य हुआ कि अजमेर जैसे नगर में, जहाँ सैकड़ों आर्य परिवारों का निवास है, एक वृद्ध संन्यासी को जलते कोयलों से तपती सिगड़ी के सामने बैठकर टिक्क्ड़ पकाने के लिए क्यों बाध्य होना पड़ा। मैंने जब यह शंका स्वामीजी के सामने रखी तो उन्होंने स्पष्ट कहा कि आर्यों की इस नगरी अजमेर में मुझ संन्यासी को दो रोटी खिलानेवाला भी कोई आर्य गृहस्थ नहीं है। मुझे इससे दुःख हुआ जो स्वाभाविक था। बात यह थी कि आर्य साहित्य मण्डल उनका **'निरुक्त सम्मर्श'** नामक वृहद् ग्रन्थ छाप रहा था और नित्य प्रूफ शोधन के लिए लेखक का वहाँ रहना आवश्यक था। इसी प्रयोजन से स्वामी ब्रह्ममुनि मण्डल की इस कोठरी में अपना डेरा जमाये थे और स्वयंपाकी बनकर अपने कार्य में लगे थे। तथापि उन्हें कोई गिला–शिकवा नहीं था।

कालान्तर में मैं अजमेर आ गया और परोपकारिणी सभा में संयुक्त मन्त्री का पद सँभाला तो सभा ने ऋषि दयानन्द के अवशिष्ट ऋग्वेद भाष्य को ऋषि की ही शैली में पूरा कराने के लिए स्वामी ब्रह्ममुनि की सेवाएँ लीं। उनके निवास की व्यवस्था सरस्वती भवन (आना सागर तटवर्ती ऋषि उद्यान) में कर दी गई। वार्धक्य के कारण स्वामीजी स्वयं लिखने में कठिनाई अनुभव करते थे। इसे देखते हुए पं. मदनमोहन शास्त्री को लेखक के रूप में उनके साथ लगाया। अब स्वामीजी बोलते जाते और शास्त्रीजी उसे लिखते। इस प्रकार दो खण्डों में ऋग्वेद का दशम् मण्डल तथा सप्तम् मण्डल (61वें सूक्त के तीसरे मन्त्र से 68वें सूक्त पर्यन्त) का भाष्य पूरा हुआ और परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुआ। इस दौरान स्वामीजी से प्रायः मेरी भेंट हो जाती थी। एक अन्य घटना का स्मरण आता है। मैं अपने साथी श्री छोटमल आर्य के साथ भ्रमणार्थ मसूरी गया और वहाँ के आर्यसमाज मन्दिर में ठहरा। भयंकर शीत और हमारे पास ओढ़ने बिछाने के स्वल्प वस्त्र। स्वामीजी वहाँ ठहरे हुए थे। मेरा उनसे व्यक्तिशः परिचय था। उन्होंने हमें सर्दी से त्रस्त देखकर मन्त्रीजी से शीत से बचने के लिए उपयुक्त कम्बल आदि दिलवाये।

पं. प्रियरत्न आर्ष–स्वामी ब्रह्ममुनि का साहित्य संसार

स्वामीजी उच्चकोटि के लेखक, शास्त्रों के गम्भीर अनुशीलनकर्ता तथा शास्त्रगत गुत्थियों को सुलझाने में दक्ष मीमांसक थे। वैदिक शास्त्रों में उनकी निर्बाध गति थी और वे विभिन्न शास्त्रीय विषयों पर अधिकारपूर्वक लिखने का सामर्थ्य रखते थे। उनके द्वारा जो विपुल साहित्य लिखा गया, उसका संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है–

वेद व्याख्या तथा वेदविषयक समीक्षा ग्रन्थ – 'वेदाध्ययन प्रवेशिका' 'वैदिक ईश वन्दना', 'मित्रावरुण की शिक्षा' 'वैदिक सूर्य विज्ञान', 'सामसुधा' 'यम पितृ परिचय' 'विश्व विज्ञान और परमात्मा बोध' 'ब्रह्मचर्य विज्ञान' 'वैदिक वन्दन' 'वेद में देवृकामा या देवकामा' **'यम–यमी संवाद सूक्त'** 'वैदिक अध्यात्मसुधा', 'वैदिक योगामृत' वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियाँ, 'सोम–सरोवर का स्नान' 'अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र', 'अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या', 'अथर्ववेदीय अतिथि सत्कार' और 'मांस शब्द'। 'वैदिक ज्योतिष शास्त्र', 'वैदिक मनोविज्ञान', 'ब्रह्मपारायण यज्ञ की शास्त्रीयता'।

उपनिषद् विषयक ग्रन्थ– 'उपनिषद् सुधासार', 'उपनिषदों का वेदान्त', 'छान्दोग्य तथा बृहदारण्यकोपनिषद् कथामाला'।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

आयुर्वेदानुसार शीत ऋतु में कैसे रहें?

● डॉ. गगन ठाकुर

आयुर्वेद में ऋतुओं का विशेष स्थान है। यह हमारा अहोभाग्य है कि हमारे देश में छः ऋतुएँ पाई जाती हैं जो कि संसार के किसी भी देश में नहीं मिलती हैं। ऋतुओं के अनुसार आहार विहार से ही मनुष्य शरीर में उत्पन्न रोगों को ठीक किया जा सकता है। आज आधुनिक चिकित्सा भी ऋतुओं पर आधारित रोगों को स्वीकार कर रही है।

आयुर्वेद शास्त्र में छः ऋतुएँ–शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद और हेमन्त ऋतु, तीन दोष–वात, पित और कफ, पंच महाभूत आकाश, वायु अग्नि, जल और पृथ्वी, षड़रस–मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय, सप्त धातुएँ – रस, रक्त माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र मानी गई हैं तथा भिन्न–भिन्न ऋतुओं में भिन्न–भिन्न दोषों का संचय, प्रकोप और प्रशमन होता है। पाँच भौतिक पदार्थ पंच महाभूत से बने हुए शरीर की वृद्धि या क्षय करते हैं। पंच महाभूतों से उत्पन्न षड़रस भी वातादि दोषत्रय तथा रस रक्तादि सप्त धातुओं की वृद्धि या क्षय करते रहते हैं। आयुर्वेद का चिकित्सा सिद्धान्त इन्हीं पर आधारित है। इसलिए जिस ऋतु में जिस दोष का संचय या प्रकोप होता हो उस ऋतु में उस दोष को नष्ट करने वाला आहार दोष प्रशामक कहलाता है। जैसे वर्षा ऋतु में वात का प्रकोप होता है तो उसमें स्निग्ध, मधुर, अम्ल, लवण और उष्ण पदार्थ तथा शरद ऋतु में पित्त का प्रकोप होता है तो उसमें शीत, मधुर, कषाय और तिक्त पदार्थ तथा वसन्त ऋतु में कफ का प्रकोप होता है तो उस में उष्ण, कषाय, कटु और तिक्त रस वाले भोज्य पदार्थ देने से दोषों का विनाश होता है। अतः ऋतुओं के अनुरूप आहार विहार को अपनाकर शरीर को हृष्ट–पुष्ट रखा जा सकता है।

ऋतुएँ

भारत को भूलोक का गौरव तथा प्रकृति का गुण्य लीलास्थल कहा गया है। भारत में मुख्यतः छः प्रकार की ऋतुएँ अपनी छटा बिखेरती हैं। प्रत्येक ऋतु दो माह की होती है। प्रथम तीन ऋतुएँ सूर्य के उत्तरायण काल में रहती हैं, सूर्य की उष्मा से सौभ्यता शोषित होने के कारण इसे आदान काल भी कहा जाता है। शेष तीन ऋतुएँ सूर्य के दक्षिणायन काल की है और बल बढ़ने से इसे विसर्ग काल भी कहा जाता है। हेमन्त तथा शिशिर ऋतु भारत की 6 ऋतुएँ हैं। कलेंडर के अनुसार नवम्बर के मध्य से मार्च के मध्य तक ये ऋतुएँ रहती हैं।

उत्तरायण

सूर्य जिस काल में उत्तर दिशा में गमन करता है, उस काल को उत्तरायण कहते हैं। इस गमन से शिशिर, बसन्त व ग्रीष्म ऋतुओं का निर्माण होता है। इस काल में सूर्य अपनी तीक्ष्ण किरणों द्वारा व वायु अपनी रुक्षता से संसार के स्निग्ध व जलीय अंश को शोषण कर लेते हैं। इससे शरीर में रुक्षता व दुर्बलता आती है। शिशिर, बसन्त व ग्रीष्म में सूर्य की किरणें उत्तरोतर प्रखर हो जाती है। दिन बड़े व रातें छोटी हो जाती हैं जिससे शारीरिक बल भी यथाक्रम घटता जाता है। परिणामतः ग्रीष्म में सूर्य की किरणें उत्तरोतर प्रखर हो जाती हैं। दिन बड़े व रातें छोटी हो जाती हैं जिससे शारीरिक बल भी यथाक्रम घटता जाता है। परिणामतः ग्रीष्म में सर्वाधिक दुर्बलता आती है।

दक्षिणायन

सूर्य जिस काल में दक्षिण दिशा में गमन करता है, उस काल को दक्षिणायन कहते हैं। इस गमन से वर्षा, शरद, हेमन्त ऋतुओं का निर्माण होता है। इस काल में सूर्य का तेज कम व चन्द्रमा पूर्ण बलवान रहता है। वह भूमण्डल पर अपनी शीतल किरणें फैलाकर विश्व को आप्यायित (तृप्त) करता है। इससे शरीर में स्निग्धता व बल की वृद्धि होती है। वर्षा, शरद व हेमन्त में चन्द्रमा का स्नेहोत्पादन उत्तरोतर बढ़ता जाता है। हेमन्त ऋतु में प्राणियों को सर्वाधिक बल की प्राप्ति होती है।

सामान्य रुप से हेमन्त और शिशिर दोनों ऋतुयें यद्यपि समान होती हैं किन्तु शिशिर में कुछ विशेषता होती है। आदानकाल होने से शिशिर ऋतु में रूक्षता आ जाती है तथा मेघ, वायु और वर्षा के कारण अधिक ठण्ड पड़ने लगती है। अतः शिशिर ऋतु में भी हेमन्त ऋतु की तरह सब विधियों का पालन करना चाहिए। विशेष रूप से निवात (तीव्र वायु रहित) तथा उष्ण गृह में निवास करना चाहिए।

स्वास्थ्य प्रद मौसम

आयुर्वेद में शीत ऋतु को स्वास्थ्य बनाने की ऋतु कहा गया है। अग्नि उच्च होती है इसलिए वर्ष का यह सबसे स्वास्थ्यप्रद मौसम होता है जिसमें भरपूर ऊर्जा, शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। इस ऋतु में दिन छोटे और रातें बड़ी होती हैं इसलिए शरीर को अधिक समय तक नींद और विश्राम मिलने के अलावा आहार को पचाने का समय भी अधिक मिलता है जिससे पाचन शक्ति और भूख बढ़ जाती है। शिशिर ऋतु में शरीर की तेल मालिश और गर्म जल से स्नान की आवश्यकता प्रतीत होती है। व्यायाम और अच्छी मात्रा में मधुर, अम्ल एवं लवण खाद्य शरीर की अग्नि को बढ़ाते हैं।

शरीर पर प्रभाव

शीत ऋतु में जठराग्नि बढ़ जाती है और इससे गुरु भोजन को पचाने में भी सक्षम हो जाता है। इस ऋतु में शरीर में बल की वृद्धि होती है। अगर ठीक प्रकार से भोजन का सेवन न किया जाए तो जठराग्नि शारीरिक धातुओं को जलाना शुरू कर देती है जिससे कि शरीर में कमज़ोरी आ जाती है।

दोषों की स्थिति

इस ऋतु में कफदोष का संचय होना शुरू होता है। जठराग्नि अधिक रहती है और अधिक गुरु भोजन भी शीघ्र ही पच जाता है। उचित आहार न मिलने से शरीर में वायु का प्रकोप होने लगता है।

आहार विहार

ऋतु परिवर्तन से शरीर व दोषों के ऊपर विशेष प्रभाव पड़ता है जिससे विभिन्न काल में दोषों का संचय, प्रकोप व शमन होता है। आधुनिक समय में सामान्य तौर पर मनुष्य ऋतुओं के अनुरूप अपने स्वास्थ्य का कम ध्यान रखता है, क्या खाना चाहिए और क्या न खाना चाहिए। अतः स्वास्थ्य संरक्षण हेतु मानव को आयुर्वेदानुसार वर्णित ऋतुओं के अनुरुप आहार–विहार का सेवन करना चाहिए जिससे दोषों का संतुलन बना रहे और शरीर स्वस्थ रहे।

पथ्य आहार

चावल, गेहूँ, मक्का, उड़द, पालक, कद्दू, गोभी, मूंग दाल, कुलथ, आलू, शकरकन्द, गाजर, अदरक आदि का सेवन करें। फलों में अनार, अमरूद, काजू, मुनक्का, अखरोट, बादाम, पिस्ता का सेवन करें।

पथ्य विहार

योगासन करना, प्रातः सैर करना, नियमित शरीरिक व्यायाम करना, गर्म जल से स्नान करना और उसके पश्चात् तेल से शरीर की मालिश करना लाभकारी होता है। शरीर को ठण्ड से बचाए रखने के लिए ऊनी व गर्म वस्त्र धारण करने चाहिए।

अपथ्य आहार

इस ऋतु में कटु, तिक्त जैसे रसों का सेवन नहीं करना चाहिए। वात को बढ़ाने वाले पदार्थ जैसे चना, मटर, राजमा का उपयोग नहीं करना चाहिए। शीतल जल का त्याग करना चाहिए।

अपथ्य विहार

इस ऋतु में ठण्ड अधिक रहती है। अतः ठण्ड वाले स्थान में नहीं रहना चाहिए। शीतल जल से स्नान व पतले वस्त्रों का परिधान नहीं करना चाहिए।

शीत ऋतु में होने वाले मुख्य रोग

शीत ऋतु में अधिक सर्दी होने के कारण खांसी, जुकाम हो जाता है तथा बुखार होने की संभावना भी बनी रहती है। हाथ–पैर ठण्डे होना, त्वचा का खुश्क होना, गले में खराश रहना आदि समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अस्थमा, जोड़ों में दर्द भी हो सकता है। सूखी और कफ़जन्य खांसी आदि बीमारियाँ शिशिर ऋतु में होती हैं।

यदि आयुर्वेदानुसार आहार–विहार पर ध्यान रख कर भोजनादि किया जाए एवं स्वास्थ्यवर्धक औषध जैसे अश्वगंधा, आँवला, स्वर्ण भस्म, रौप्यभस्म, पिप्पली रसायन आदि का उचित मार्गदर्शन पर सेवन किया जाए तो उत्तम स्वास्थ्य एवं ज़रा (बुढ़ापा) तथा रोगों को दूर किया जा सकता है।

दयानन्द आयुर्वेदिक कॉलेज,
जालन्धर–144008
मो. 9465466589

☞ *पृष्ठ 08 का शेष*

सर्वशास्त्र निष्णात : स्वामी ...

वेदाङ्ग ग्रन्थ – 'याज्ञवल्क्य शिक्षा सम्पादन', 'अव्ययार्थ निबन्धनम्', तथा पूर्वोक्त 'निरुक्त सम्मर्श'।

षड्दर्शन विषयक ग्रन्थ – स्वामीजी ने सांख्य, वेदान्त तथा वैशेषिक दर्शनों का पाण्डित्य पूर्ण संस्कृत भाष्य लिखा। न्यायदर्शन के वात्स्यायन भाष्य का हिन्दी में आंशिक अनुवाद किया।

अन्य ग्रन्थ – 'रामायण दर्शन' तथा 'महाभारत शिक्षा सुधा' – (1) 'विमान शास्त्र' (2) 'बृहद् विमान शास्त्र' योगमार्ग, वैदिक राष्ट्रियता, बाल जीवन सोपान, युगधर्म, राजनीति और विश्व शान्ति, जीवनपथ, क्रियात्मक मनोविज्ञान, मानवीय शक्तियों का परिचय और उनका विकास आदि।

कुछ वर्ष पूर्व मेरठ जिले के एक अपठित ब्रह्मचारी कृष्णदत्त ने सुप्तावस्था में अनर्गल वाक्य बोलकर समाधि अवस्था में उपदेश देने का ढोंग किया और कतिपय आर्यसमाजियों ने उसके इस पाखण्ड को जान–बूझ कर प्रश्रय तथा संरक्षण दिया तो स्वामीजी ने 'भ्रमनिवारण' (ब्रह्मचारी कृष्णदत्त के पाखण्ड का खण्डन) शीर्षक पुस्तक लिख कर इस मूर्खता एवं पाखण्डपूर्ण कृत्य का प्रबल खण्डन किया। सत्य का पक्ष लेने के कारण कृष्णदत्त के अन्ध अनुयायियों ने स्वामी जी के लिए कठोर एवं अपशब्दों का प्रयोग किया, किन्तु मानपमान को समान समझने वाले इस संन्यासी ने इसकी किञ्चित मात्र भी परवाह नहीं की और वे सत्य एवं न्याय के पथ पर अविचलित रहे। जीवनपर्यन्त विद्या व्यसन को अपना संगी बनाने वाले इस संन्यासी को प्रायः कठोर व रुक्ष प्रकृति का समझा गया, किन्तु वे ऐसे थे नहीं।

आर्य समाज के प्राज्ञ पुरुष से साभार

पत्र/कविता

खुदी पर विश्वास नहीं, ईश से क्या आस

ऐसी कमाई मत करो, जो पीछे रह जाय।
नेकी जीवन में करो, काम सदा जो आय।।

मंजिल को तू पा सके, हो खुद पर विश्वास।
खुदी पर विश्वास नहीं, ईश से क्या आस।।

यह तो ताकत वक्त की, बने नूर बेनूर।
कीमत जाने वक्त की, फकीर बने हजूर।।

निंदा से डर कर कभी, राह छोड़ ना जाय।
मंजिल मिलते ही सदा, बदले सबकी राय।।

छीन निवाला और को, खाता समझे शान।
पेट कभी ना भर सके, झूठा है अभियान।।

खाता जो भी बाँट कर, वह तो पुण्य कमाय।
यज्ञ आहूति दे रहा, जीवन यज्ञ बनाय।।

जतन अगर हम कुछ करें, गांठे सब खुल पाय।
कैंची गर चलाई तो, उम्मीदें कट जाय।।

गलती अपनी जानकर, साहस से स्वीकार।
देता पश्चाताप ही, माफी का अधिकार।।

अच्छी बातें तो सदा, जल्द समझ ना आय।
बुरे परिणाम ही तुझे, सत्य सदा समझाय।।

धैर्य जो भी रख सके, कभी नहीं गिर पाय।
सबकी नजरों में सदा, अपनी जगह बनाय।।

करम में स्वतंत्र तू, इच्छा से कर पाय।
करम बना कर लेखनी, भाग्य खुद लिख जाय।।

रचना से ही देख लो, कैसा रचनाकार।
उसके जैसा कौन है, करता पर उपकार।।

आदि कवि की कविता को, पढ़े जान जो जाय।
उसकी बनी रचना में, देख उसी को पाय।।

उसके जैसा है नहीं, मेरा कोई यार।
साथ सदा मेरे रहे, करता है उपकार।।

धन निधन तक माँग रहा, साथ नहीं जो जाय।
पूंजी नेकी की कमा, तेरा साथ निभाय।।

नरेन्द्र आहूजा विवेक
602, जी.एच. – 53 सैक्टर–20,
पंचकुला हरियाणा
मो. 09437608688

तीनों सार्वदेशिकों के प्रधान अपने वचन का पालन नहीं कर रहें हैं

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि की तीनों सभाओं के प्रधान, राष्ट्रीय बुद्धिजीवी एवं आर्य विद्वान् महासम्मेलन जो 2,3,4 फरवरी 2017 को हैदराबाद में सम्पन्न हुआ था, उसमें शामिल हुए थे। साथ ही तीनों सार्वदेशिकों के मंत्री भी इस महासम्मेलन में उपस्थित थे। यह महासम्मेलन आदरणीय विट्ठल राव जी आर्य के संचालन में हुआ। इस महासम्मेलन में आर्यजगत के अधिकतर बड़े-बड़े सन्यासी, विद्वान, उपदेशक, भजनोपदेशक व कर्मठ कार्यकर्ता थे। मुझे कोई बड़ा निर्णय होने की सम्भावना थी, इसलिए मैं भी महासम्मेलन में शामिल हुआ था।

इस महासम्मेलन में आर्य समाज के हित के लिए कई निर्णय हुए। एक निर्णय जो तीनों सार्वदेशिकों को मिलाकर एक स्वच्छ व साफ सार्वदेशिक बनाने का था, उसके लिए आर्य समाजों के सभी प्रतिष्ठित महानुभावों ने इन तीनों सार्वदेशिकों के प्रधानों से निवेदन किया कि आप तीनों मिलकर एक सार्वदेशिक सच्चे, त्यागी, तपस्वी, विद्वान योग्य तथा आर्य समाज के प्रति समर्पित आर्यजनों की एक आदर्श सार्वदेशिक बना ले ताकि आर्य समाज के कार्य मानव सेवा, परोपकारी व वेद प्रचार के सभी कार्य संगठित व सुचारु रूप से होने लगें जिससे सरकार और जनता में हमारी खोई हुई छवि व प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हो सके।

तीनों सार्वदेशिकों के प्रधान व मंत्रियों ने मिलकर यह निर्णय लिया कि जो अभी कोर्ट में केश व मुकदमें चल रहे हैं, उनको उठाकर जल्दी से जल्दी यानी अधिक से अधिक दो महीनों में हम तीनों मिलकर एक सार्वदेशिक आर्य सभा जरूर बना लेंवेंगे और इस बात की मंच से भी घोषणा कर दी गई।

दुःख की बात यह है कि इस महासम्मेलन को हुए आज करीब दस महीने हो गये। अभी तक एक सार्वदेशिक हो जाने की घोषणा तो दूर बल्कि ज्ञात तो यह होता है कि अभी तक कोई कार्यवाही ही नहीं हो रही है।

अभी कुछ महीनों पहले आर्य समाज बड़ा बाजार के किसी कार्यक्रम में पूज्य स्वामी आर्यवेश जी से मैंने पूछा कि एक सार्वदेशिक होने में कितनी प्रगति हुई है, तब उन्होंने कहा था कि मैं इस कार्य के लिए बहुत प्रयत्नशील हूँ। मुझे आशा है कि हम बहुत जल्दी ही उस निर्णय पर पहुँच जायेंगे।

लगता ऐसा है अभी तक तीनों प्रधानों ने कोई ठोस निर्णय तो लिया ही नहीं बल्कि उस दिशा में आगे बढ़ना ही नहीं चाहते।

मैं तीनों सार्वदेशिकों के प्रधानों व मन्त्रियों से करबद्ध निवेदन करता हूँ कि वे यदि देव दयानन्द के सच्चे अनुयायी हैं, सच्चे समाजी हैं और सच्चे आर्य समाज के हितैषी हैं तो उनको अपने पद के प्रति सम्मोह व स्वार्थ छोड़कर शीघ्र से शीघ्र एक सार्वदेशिक बनाने का निर्णय लेकर सच्चे आर्य समाजी होने का परिचय देना चाहिए और महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज 1875 में मुम्बई में स्थापना करके जो **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** का स्वप्न देखा था उसे साकार करना चाहिए।

खुशहाल चन्द आर्य
गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स,
180 एम.जी. रोड (दोतल्ला)
कोलकाता –700007
मो. 9830135794

****

धारणा लगते ही ध्यान लगाना संभव है

कुछ सज्जनों का कहना है कि सन्ध्या (ईश्वर भक्ति) करते समय ध्यान नहीं लगता। ध्यान क्यों नहीं लगता इसका कारण है कि धारणा दृढ़ नहीं है। ध्यान लगाने से पहले धारणा बनानी पड़ती है। यदि धारणा पक्की नहीं है तब ध्यान कभी नहीं लगेगा। ध्यान लगाने के लिए धारणा को अटूट बनना पड़ता हैं।

धारणा बनती है मन के द्वारा और मन है चंचल। फिर पहले मन को वश में करो। मन बुद्धि के अधीन है। यदि बुद्धि में ही मलिनता भरी हुई है तब मन मनमानी करने में स्वतंत्र हो जाता है। इन्द्रियों के बहकावे में आकर संयम खो देता है। धारणा धरी रह जाती है। फिर ध्यान लगाने का प्रश्न ही नहीं होता।

प्रिय बंधुओ! पहले बुद्धि को निर्मल करो! बुद्धि की निर्मलता के लिए शुद्ध सात्विक आहार ग्रहण करो! तामसिक भोजन से बचो जो बुद्धि भ्रष्ट करता है। विद्वानों का सत्संग करो! आर्य पुस्तकों का स्वाध्याय करो। मन को वश में करने के लिए प्राणायाम द्वारा अभ्यास करो। मन में धारणा बनाओ कि ईश्वर उपासना करनी आवश्यक है। धारणा लगते ही ध्यान लगाना संभव है। जैसे प्यासे व्यक्ति की धारणा पानी प्राप्त करने की ओर ध्यान लगा देती है ऐसे ही ईश्वर भक्ति बनाने से ध्यान लग जाता है।

देवराज आर्य मित्र
नई दिल्ली–64

****

गुरुकुल लाड़वा का 82वाँ चरित्र निर्माण शिविर सम्पन्न

यज्ञशाला गुरुकुल लाड़वा (इन्द्री रोड़ लाड़वा) का 82वाँ चरित्र निर्माण शिविर हर्षोल्लाष के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर नेत्र जाँच शिविर का आयोजन किया गया जिसमें लभभग 274 मरीजों की आँखों की जाँच की गई और 29 मरीजों को चश्में वितरित किए गये। शिविर का शुभारम्भ एम.के. जैन तथा शहीद प्रगट सिंह रंभा की धर्मपत्नी रमनजीत कौर ने रिबन काटकर किया। उनके साथ शिविर में शहीद की माता जी व परिवार भी उपस्थित हुआ। प्रातः यज्ञ का शुभारम्भ हुआ, जिसमें इन संस्था के

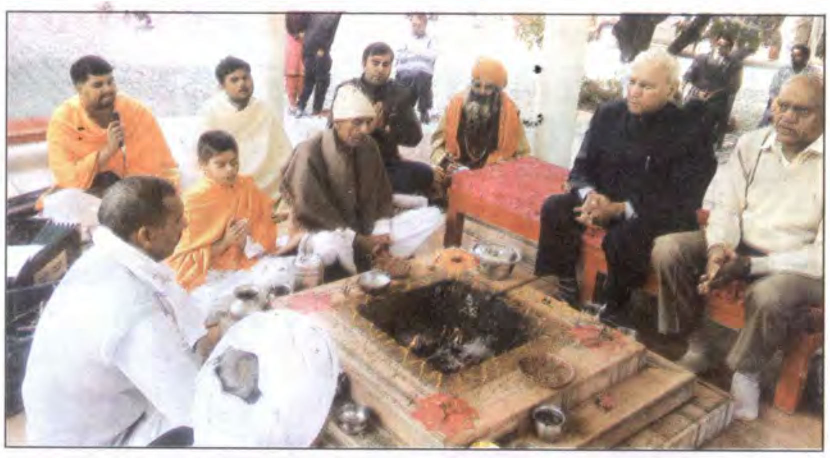

संस्थापक जस्टिस प्रीतमपाल यजमान के रूप में रहे। यज्ञ आचार्य कृष्णदेव शास्त्री व उनके ब्रहमचारियों ने मन्त्र पाठ के साथ सम्पन्न कराया। यज्ञ के पश्चात् बहन नीरज व स्वामी जी ने अपने सुमधुर भजनों के द्वारा सभी को मन्त्र मुग्धकर दिया। धर्मपाल नांदल जी भजनोपदेशक ने भी लोगों को देश के विषय में बताया और अन्त में जास्टिस प्रीतमपाल ने अपना उद्बोधन देते हुए कहा कि व्यक्ति को शिक्षित होना ज़रूरी है परंतु चरित्रवान होना शिक्षित होने से कहीं ज्यादा ज़रूरी है इसलिए हमें अपने बच्चों को चरित्रवान बनाना चाहिए, इसका एकमात्र उपाय केवल अच्छी शिक्षा है। ऋषि लंगर के साथ शिविर सम्पन्न हुआ।

आर्य समाज, सैक्टर सात-बी चण्डीगढ का 60वाँ वार्षिक उत्सव

आर्य समाज मन्दिर सैक्टर सात-बी चण्डीगढ के 60वें वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में स्वामी सम्पूर्णानन्द सरस्वती जी, आर्य प्रादेशिक सभा के प्रधान श्री रवीन्द्र तलवाड़ एवं अन्य सदस्यों द्वारा श्री अश्वनी कुमार शर्मा प्रबन्धक अफसर डी.ए.वी. पब्लिक सी. सैं. स्कूल रूपनगर को आर्य समाज के प्रति प्रशंसनीय कार्यों के लिए सम्मानित किया गया।

डी.ए.वी. भडोली नादौन के प्रधानाचार्य हमीर गौरव अवार्ड से सम्मानित

डी.ए.वी. भडोली नादौन हिमाचल प्रदेश के प्रधानाचार्य आर.एस. राणा को इनकी बेमिसाल एवं अतुलनीय उपलब्धियों के लिए उन्हें हमीर गौरव अवार्ड से महाराजा संसार चंद की ऐतिहासिक नगरी सुजानपुर टीहरा के चौगान में आयोजित सर्वकल्याणकारी संस्था की ओर से भव्य 16 वें वार्षिक समारोह में पूर्व मुख्यमंत्री वीरभद्र सिंह के करकमलों द्वारा प्रदान किया गया।

यह स्कूल, पूरे इलाके तथा डी.ए.वी. संस्था के लिए हर्ष एवं गौरव का विषय है। राणा ने शिक्षा के क्षेत्र में बच्चों तथा संस्था के लिए नए आयाम स्थापित किए हैख जिनमें उनका बहुमूल्य योगदान रहा है। इन्होंने डी.ए.वी. संसथान सहित अनेक महत्वपूर्ण शैक्षणिक संस्थानों में अपनी उत्कृष्ट सेवाएँ प्रदान की।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर ...

मुख्य अतिथि प्रिंसिपल श्री एच.आर. गंधार द्वारा विद्यालय में स्थापित की गई अटल टिंकरिंग लैब (ए टी एल) का लोकार्पण भी किया गया।

श्रीमती शर्मा द्वारा विद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा शिक्षा के साथ-साथ खेलकूद, विज्ञान, अलग अलग प्रतियोगिताओं व अन्य क्षेत्रों में प्राप्त की गई उपलब्धियों पर प्रकाश डाला।

प्रिंसीपल श्री गंधार ने संबोधन में कहा कि स्वामी दयानंद जी द्वारा उस काल में कही गई विज्ञान संबंधी बातें आज के परिवेश में शत-प्रतिशत खरी उतर रही हैं।

विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि मेहनत का कोई शॉर्ट कट नहीं है। सदैव ज्ञान का पिपासु बनना चाहिए व अपनी उत्सुकता को कभी भी शांत नहीं रहने देना चाहिए। जीवन की ऊंचाइयों का शिखर दृढ़ निश्चय, लक्ष्य की स्पष्टता व समर्पण के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। अभिभावक अत्यंत विश्वास के साथ एक शिक्षक के पास अपने बच्चों को भेजता है व शिक्षक को उस बालक को तराशने में कभी भी कोई कोर कसर बाकी नहीं छोड़नी चाहिए।

प्री-प्राइमरी के छात्रों ने 'सेविंग एनवायरनमेंट' के महत्व के बारे में लोगों को जागरूक करने के लिए एक एक्शन गीत प्रस्तुत कर उपस्थिति को एक विशेष संदेश दिया। अंग्रेज़ी प्ले 'द चॉइस-रीयल या वर्चुअल' दर्शकों के लिए आँखें खोलने वाला था। प्राइमरी छात्रों द्वारा एक नुक्कड़ नाटक भी प्रस्तुत किया गया था जिसमें बच्चों द्वारा अपने माता-पिता से उनके साथ कुछ गुणवत्तापूर्ण समय बिताने का अनुरोध किया गया, जिसे दर्शकों ने खूब सराहा।

विद्यालय के ही कुछ शिक्षकों को उनकी अद्भुत प्रेरणादायक उपलब्धियों के लिए सम्मानित भी किया गया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 12/13-12-2018

डी.ए.वी. सेक्टर-14 , गुरुग्राम में सांस्कृतिक समारोह

डी.ए.वी. सेक्टर – 14 , गुरुग्राम के तत्वावधान में रंगारंग वार्षिक समारोह का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के उपाध्यक्ष तथा विद्यालय के अध्यक्ष श्री प्रबोध महाजन जी की उपस्थिति ने डी.ए.वी. प्रांगण को गौरवान्वित किया। विद्यालय के प्रबंधक श्री आर.आर. भल्ला तथा स्थानीय प्रबंधन समिति के सदस्यों की उपस्थिति ने छात्रों में नवोत्साह का संचार किया।

प्राचार्या श्रीमती अपर्णा एरी ने मूल्यपरक शिक्षा को अपने शिक्षण संस्थान का प्रतीक चिह्न बताते हुए नैतिक मूल्यों को संस्था का आधार बताया। उन्होंने छात्रों के सर्वांगीण विकास पर भी बल दिया। मुख्य अतिथि श्री प्रबोध महाजन जी ने अपने वक्तव्य में बच्चों में बढ़ती असहिष्णुता पर चिंता व्यक्त की। इसके समाधान हेतु उन्होंने अभिभावकों को बच्चों के साथ अधिकतम समय व्यतीत करने तथा उन्हें प्रतिस्पर्धात्मक दौड़ से दूर रखकर स्वतंत्र विकास का अवसर देने का सुझाव दिया।

छात्रों द्वारा बजाए गए विविध भारतीय तथा पाश्चात्य वाद्ययंत्रों के समागम द्वारा उत्पन्न ध्वनियों ने विद्यालय के समस्त परिवेश को संगीतमय कर दिया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ 'गूँज रहा मन का आँगन' मंगलगान द्वारा किया गया। छात्राओं के नृत्य द्वारा सरस्वती जी की वंदना तथा उपासना की गई। अंग्रेज़ी नाटक 'द डायमंड नेकलेस' ने सभागार में उपस्थित सदस्यों का मन मोह लिया।

कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण **'मृगतृष्णा : खोज खुशी की'** नृत्य नाटिका रही।

आर्य विद्वान् शिवनारायण उपाध्याय द्वारा रचित पुस्तक का हुआ विमोचन

कोटावासी आर्य जगत् एवं डी ए वी के प्रसिद्ध विद्वान् श्री **शिवनारायण उपाध्याय** द्वारा रचित **वैदिक ऋषिकाएँ** नामक पुस्तक का विमोचन आर्य समाज कुन्हाडी के वार्षिक उत्सव के कार्यक्रम में भव्यता पूर्वक किया गया। इस पुस्तक में श्री उपाध्याय ने स्वाध्याय आधारित शोध कार्य से यह सिद्ध किया है कि वेदमंत्रों के साक्षात्कार कर्ता केवल ऋषियों ही नहीं वरन् ऋषिकाओं ने भी मंत्रों का साक्षात्कार कर मंत्रों को आत्मसात् किया। इस पुस्तक में इन्होंने 33 ऋषिकाओं का वर्णन किया है। यह शोध निस्संदेह आर्य जगत् को एक दिशा प्रदान करेगा।

इस अवसर पर डी.ए.वी. स्कूल कोटा की **प्राचार्या सरिता रंजन गौतम** मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थीं। अपने उद्बोधन में सरिता रंजन गौतम ने उपाध्याय जी के इस शोध कार्य की बधाई देते हुए कहा कि उपाध्याय जी का यह प्रयास अपने आप में एक न केवल अनुपम कार्य है बल्कि अन्य शोधकर्ताओं के लिए भी प्रेरणास्प्रद है। वे उन विषयों पर भी कार्य करें जो प्रायः अभी तक अछूते रह गए हैं। उपाध्याय जी द्वारा रचित पुस्तक के विमोचन में उपस्थित रहना मेरे लिए निश्चित ही सौभाग्य का विषय है। इस अवसर पर मैं आप सभी से यह उम्मीद करती हूँ कि आप इस प्रकार के कार्यक्रम में भाग लेकर कुछ रचनात्मक कार्य सीखकर इस समाज एवं राष्ट्र के लिए उपयोगी जीवन जीकर देश को महर्षि दयानन्द जी के सपनों का भारत बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देंगे।

इस अवसर पर कोटा नगर की सभी आर्य समाजों के सभासद् एवं अधिकारी गण एवं डी.ए.वी. विद्यालय के धर्मशिक्षक शोभाराम आर्य आदि आर्य जन उपस्थित थे।

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में यज्ञ का आयोजन

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में, प्राचार्या प्रो. डॉ. श्रीमती अजय सरीन के कुशल नेतृत्व में नॉन टीचिंग सदस्यों द्वारा मासिक यज्ञ का आयोजन यज्ञशाला में किया गया। कार्यकारी प्राचार्या डॉ. श्रीमती कंवलदीप कौर ने मुख्य यजमान की भूमिका निभाते हुए यज्ञ में अन्य सदस्यों सहित आहुतियाँ डालीं। श्रीमती अनुपमा कर्ल्क ने मासिक विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि हम सब को आगे बढ़ने के लिए किसी को नीचा दिखा कर बढ़ने की अपेक्षा अत्यधिक परिश्रम करना चाहिए। सुप्रिंटेंडेंट जनरल श्री रमन बहल ने अपने विचार में एक लघु कथा द्वारा माँ और बच्चे के सम्बन्धों को प्रगाढ़ बताते हुए कहा कि माँ के प्यार के ऋण से मुक्त होना मानव के लिए असम्भव है। डॉ. श्रीमती कंवलदीप ने इसी बात को बढ़ाकर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि हमें परिश्रम करके ही उन्नति के शिखर तक पहुँचाना चाहिए और सब को मिलजुल कर काम करना चाहिए। हमें एक दूसरे की सहायता करने की भावना रखनी चाहिए।

श्रीमती सुनीता धवन, विभागाध्यक्षा संस्कृत विभाग के यजुर्वेद के मन्त्रों द्वारा अपनी मधुर आवाज़ में मन्त्रोच्चारण से यज्ञ सम्पन्न करवाया। जिन सदस्यों के जिनके इस महीने में जन्मदिन आने वाले हैं, उन्हें उपहार भेंटकर सम्मानित किया गया। अंत में शान्ति पाठ के साथ यज्ञ का समान किया गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**